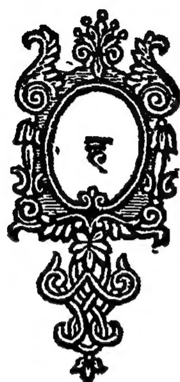


तू ही ब्रह्मनी वेद गायन सवित्री ।
तू ही धरम की तरन तारन पवित्री ॥
नमो उग्रदन्ती अनन्ती सवैया ।
नमो जोग जोगेश्वरी जोग मैया ॥





भूमिका



हमें यह लिखने में बड़ी प्रसन्नता होती है कि हमारे माननीय भ्राता श्रीमान् केप्टेन ठाकुर केसरीसिंह जी साहब देवड़ा जागीरदार गलथनी द्वारा हिन्दी साहित्य का और राजपूत जाति का समय २ पर अच्छा उपकार हो रहा है। आपकी लिखी "राजपूत जाति को सन्देश" नामक अनमोल पुस्तक-रत्न की चर्चा आज घर २ सुनाई देती है। और आशा है कि आपकी लिखी यह दूसरी अमूल्य पुस्तक भी शीघ्र ही वही आसन ग्रहण करेगी। आपका उद्योग प्रशंसनीय व अनुकरणीय है तथा इसके द्वारा राजपूत जाति का आगे भी बहुत कुछ उपकार होने की आशा है।

यहां पर यह भी प्रकट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि ठाकुर साहब ने दूसरे पुस्तक लेखकों की तरह अपनी पहली सचित्र पुस्तक को जो कि क़रीब २०० पृष्ठ की है आमदनी का जरिया न कर राजपूत जाति में सप्रेम भेंट द्वारा बड़ा ही स्वार्थ त्याग किया है।

जगत्पिता जगदीश्वर हमारी राजपूत जाति में ऐसे ही सुयोग्य, परिश्रमी और स्वार्थत्यागी सच्चे सज्जनों की वृद्धि करे। इत्योम्।

विनीत—

पेलेस
जोधपुर
शिवरात्रि सं० १९८२वि०

(ठाकुर) किशोरसिंह खीची; आफ इन्दरोका
ए० डी० सी० टू हिज हाईनेस दी महाराजा
साहब बहादुर जोधपुर (मारवाड़)

गिरते रहोगे कब तक क्षत्री कहाने वालो ?

(१)

जिस ओर देखते हैं हल्ला मचा यही है।
क्षत्रित्व के पतन की, चर्चा जहाँ तहाँ है।
क्या क्षत्री जाति पत्थर सचमुच में हो रही है ?
जिस को तनिक हृदय में लज्जा अरे नहीं है।
मुर्दान हो रहे हो, मरदानगी सम्भालो।
गिरते रहोगे कब तक क्षत्रिय कहाने वालो ?

(२)

बढ़ना न जानते हो, गिरना ही जानते हो।
अपने को ऐंठ कर गुरुघएटाल मानते हो।
अफ़सोस मन्दता से जाते अरे! कहां हो ?
खाते हो लात घूंसे नामर्द तुम वहां हो।
पक्के अफीमची हो, कुछ होश तो सम्भालो।
गिरते रहोगे कब तक क्षत्री कहाने वालो ?

(३)

हर रोज मूर्खता का तुम पाठ पढ़ रहे हो।
बकवाद पागलों सा हर रोज कर रहे हो।
घर भेद भावना से हर रोज भर रहे हो।
संग्राम यादवों सा कर रोज मर रहे हो।
नामर्द क्यों बने हो, कुछ होश तो सम्भालो।
गिरते रहोगे कब तक क्षत्री कहाने वालो ?

निवेदन

आज हम को राजपूत जाति के सामने यह आदर्श ले कर एक वार फिर उपस्थित होने का सौभाग्य मिला है। इसमें पहले अनेक प्राचीन और आधुनिक विद्वानों के वचन उद्धृत कर राजपूत जाति के कर्त्तव्यों और आदर्शों का उल्लेख किया गया है और स्थान २ पर वेदों और स्मृतियों आदि के प्रमाण भी दे दिये गए हैं। इसके बाद राजपूत जाति में फैली हुई अनेक कुरीतियों का दिग्दर्शन करा कर ऐतिहासिक विद्वानों के कपोल कल्पित विचारों का सप्रमाण निराकरण किया है। अनन्तर भारत के वाइसरायों आदि के भाषणों का वह अंश अनुवाद सहित उद्धृत किया गया है जिनमें इस जाति की उन्नति के लिये हार्दिक सहानुभूति के साथ अनेक उपायों का उल्लेख है। सब के अन्त में भारत की मुख्य २ रियासतों और अंग्रेज सरकार के बीच में हुई संधियों की वर्षानुसार तालिका दे दी गई है। यद्यपि यह पुस्तक आकार मे छोटी प्रतीत होती है फिर भी जहां तक हो सका है राजा और प्रजा के सुख और शान्ति के लिये तथा राजपूत जाति के उत्थान के लिये इसमें कोई उपयोगी बात नही छोड़ी गई है। यदि हमारे राजपूत सरदार इसको ध्यानपूर्वक पढ़ने का कष्ट उठावेंगे तो हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि उनका वह कष्ट निरर्थक न जायगा।

हमें विश्वास है कि जिस प्रकार हमारी पहली पुस्तक "राजपूत जाति को सन्देश" का भारत भर की क्षत्रिय जाति के नेताओं और वाइसराय, गवर्नरो, राजा, महाराजाओ तथा देश के बड़े २ विद्वान् नेताओं व सम्पादकों ने पसन्द कर व स्वहस्तलिखित पत्र भेज हमारा उत्साह बढ़ाने की कृपा की है, उसी प्रकार इस "राजपूतों का आदर्श" नामक दूसरी पुस्तक को भी पसन्द कर हमारा उत्साह बढ़ावेंगे।

यहां पर यह भी प्रकट कर देना चाहते हैं कि जिस समय सं० १९४८ में हम जोधपुर राज्य की तरफ से फौजी ट्रेनिंग हासिल करने के लिये नसीराबाद केन्टोनमेंट भेजे गए थे उस समय लेफ्टिनेन्ट जेनरल

महाराजा सर प्रताप की कृपा से हमारा परिचय मिलिट्री आफिस के हेड एसिस्टेंट श्री० ठाकुर हीरासिंह जी पंवार से हुआ था। ये एक अच्छे विचारों के स्वजातिय प्रेमी पुरुष थे। इनके साथ रहने से आपस में प्रेम भी हो गया और उनके उच्च विचारों का हमारे पर बहुत कुछ प्रभाव पड़ा। उसी प्रभाव व मित्रता के नाते आज हम उनकी स्मृति में यह पुस्तक समर्पण करना अपना कर्तव्य समझते हैं। हम उनके सुयोग्य पुत्र मान्यवर रावसाहब डा० ओंकारसिंहजी एल० एम० एस० मेडीकल ऑफीसर जोधपुर के भी बहुत आभारी हैं जिनकी सहायता से स्वर्गीय ठाकुर साहब का चित्र हमें प्राप्त हुआ और इस प्रकार उसके प्रकाशन का सुअवसर मिला। इसके साथ ही हम अपने मित्र इतिहासज्ञ श्री० विद्याविनोद कुँ० जगदीशसिंहजी गहलौत एम. आर. ए. एस. साबिक इन्सपेक्टर फोरेस्ट डिपार्टमेंट जोधपुर के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना भी अपना कर्तव्य समझते हैं क्योंकि "राजपूत जाति को सन्देश" नामक पुस्तक लिखने में भी उनसे हमें बड़ी सहायता मिली थी और इस "आदर्श" नामक पुस्तक लिखने में उनके रचित "भारतीय नरेश" और "भूपाल भावना" आदि पुस्तकों से बहुत कुछ सामग्री ली गई है। इसके अलावा हम उन विद्वानों के भी बहुत कृतज्ञ हैं जिनकी पुस्तकों और लेखों आदि का इसमें उल्लेख किया गया है। आगरा के "राजपूत" पत्र के सम्पादक बड़गूजर कुल भूषण ठा० हनुमन्तसिंहजी रघुवंशी भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने अपने पत्र के कुछ पुराने एतिहासिक अङ्क भेज हमें सहायता दी है।

अन्त में हम आगरा के सुप्रसिद्ध शान्ति प्रेस के सुयोग्य अध्यक्ष पं० सत्यव्रत शर्म्मा जी भारद्वाज को भी धन्यवाद दिए विना नही रह सकते जिन से इस पुस्तक को सुन्दर बनाने और समय पर निकालने में अमूल्य सहायता मिली है।

मु० गलथनी (मारवाड़)
पो० एरनपुरा रोड
बसन्तपंचमी स० १९८२ वि०

कप्तान केसरीसिंह देवड़ा
जागीरदार गलथनी
(राजपूताना) मारवाड़ स्टेट



राजपूतों का आदर्श





घुवंश में ठीक ही कहा है कि "क्षतात्किलत्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः" अर्थात् दूसरों के ज़ुल्मों से जो लोगों को बचावे उसी को "क्षत्रिय" कहते हैं। इसलिये राजपूत-क्षत्रिय जाति का कर्त्तव्य (धर्म) है कि वह जहां तक हो सके देश के कल्याण के वास्ते अपनी गहरी नींद को छोड़ कर अपने कर्त्तव्य पालन की तरफ ध्यान दे, क्योंकि इस कर्त्तव्य पालन को छोड़ देने से ही आज हमारी राजपूत जाति चारों तरफ़ बदनाम है। लोग इसको रक्षक के बजाय भक्षक समझने लगे हैं और "बाड़ खेत को खाय" वाली कहावत दिखाई देने लगी है। इसकी मौजूदा तीन तरह की हालत पर यदि कोई विचार करे तो आंसू बहाये बिना नहीं रह सकता। खेद है कि हमको अपनी हीन दीन दशा का कुछ विचार ही

नहीं होता। यदि किसी को कुछ विचार भी हुआ तो वह आलस्यवश अपनी उन्नति के लिये उद्योग ही नहीं कर सकता। किसी भी उन्नतशील जाति के लोगों में जो सद्गुण दृष्टिगत हुआ करते हैं वे राजपूत जाति में अभी मालूम ही नहीं होते। जो जाति उन्नतशालिनी होती है उसके हर एक बाल, वृद्ध वनिता सब ही उत्साही और उद्यमी होते हैं। आलस्य और कर्त्तव्य हीनता से घृणा करते हैं। कोई भी दुर्गुण और दुर्व्यसन उन में पाया नहीं जाता परन्तु हम राजपूतों में किसी अच्छे काम के लिये तो उत्साह ही नहीं होता। हम लोगों में आलस्य और अविद्या ने अपना घर कर लिया है। पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक हम देखें और थोड़ा सोचें तो सब क्षत्रियों की दशा क़रीब क़रीब एकसी गिरी हुई पावेंगे। गांवों में ही चले जाइये वहां के छोटे से छोटे भूमि स्वामी तक की भी यही दशा है कि वे या उन के कुँवर आदि आलस्य वश किसी भी काम में अपना हाथ न लगायँगे। वे सवेरे से शाम तक ख़ाली बैठे २ ही बिता देते हैं। बहुतों का समय तरह-तरह के दुर्व्यसनों में व्यतीत होता है। उनके दुर्व्यसनों की भयंकरता कानों से सुन व आंखों से देख कवि के यह शब्द स्मरण हो आते हैं:—

जब याद आती है बड़ों के उन सपूतों की कथा,
उनके सखा, संगी, विदूषक और दूतों की कथा।
तब निकल पड़ते हैं हृदय से वचन ऐसे दुख भरे—
होवें न ऐसे पुत्र, चाहे हो कुल-क्षय हे हरे!

श्रीमान् शिक्षा दें उन्हें तो श्रीमती कहतीं वहीं—
"घेरो न लल्ला को हमारे नौकरी करनी नहीं!"
शिक्षे! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी;
लो मूर्खते! जीती रहो, रक्षक तुम्हारे हैं धनी!!!

तीतर, लवे, मेंढे पतंगें वे लड़ाते हैं कभी,
वे दूसरों के व्यर्थ झगड़े मोल लाते हैं कभी।
दस बीस उनके दुर्व्यसन हों तो गिने भी जा सकें,
पथ या विपथ है कौन ऐसा वे न जिस पर आ सकें!

निकले कि फिर दस पांच चिड़ियाँ मार लाना है उन्हें।*
बंदूक ले, वन-जन्तुओं पर बल दिखाना है उन्हें।
घातक! तुम्हारी तो सहज ही शाम की यह सैर है।
पर उन अभागों से कहो, किस जन्म का क्या बैर है?

आया जहां यौवन उन्हें बस भूत मानों चढ़ गया।
जीवन सफल करणार्थ अब उनमें अपव्यय बढ़ गया।

\+ + +

यों कुछ दिनों घर फूँक कौतुक देख कर नंगे हुए।
फिर क्या हुआ? "सरकार" थे जो दीन भिखमंगे हुए।
हँसने लगा संसार उनको यार छोड़ गये सभी,
लुच्चे-लफंगे भी किसी के मीत होते हैं कभी?
आशा भविष्यत की हमारी क्या इन्हीं पर लग रही?
क्या पुन्नरक से अन्त में हमको उबारेंगे यही?
बेड़ा इन्हीं से पार होगा क्या स्वदेश-समाज का?
होगा सु-दृढ़ फिर राज्य किसके हाथ से कलिराज का?

---

* हिंसक जीवों के मारने की ही केवल शास्त्र में आज्ञा है अहिंसक की नहीं है। देखो मनुस्मृति:—

योऽहिंसकानि भूतानि हिनस्त्यात्म सुखेच्छया।
सजीवन्श्चैव मृतश्चैव न क्वचित्सुख मेधते।

हमारे इस प्रकार के राजपूत सरदार नवीन उद्योग में असमर्थ होकर अपने बाप दादाओं की थोड़ी बहुत ज़मीन जो उनके पास है उससे ही किसी प्रकार जीवन निर्वाह किये जाते हैं। परन्तु अब भौमिक सम्पत्ति के बँटवारे होते २ भूमि का बहुत ही थोड़ा भाग उनके कब्जे में रह गया है जिससे उनका या उनकी संतान का निर्वाह होना कठिन हो रहा है और इसलिये बहुधा वे लोग कर्ज़दार होकर अपनी पैतृक सम्पत्ति को रहन रखते या बेचते चले जा रहे हैं। ऐसी दशा में उनको चाहिये कि अपनी सन्तान को विद्या पढ़ा पर अनेक तरह के लाभकारी धन्धों में लगावें।

इसी उद्देश्य से आज जगह २ जातीय संस्थायें खोली जा रही हैं। परन्तु न मालूम राजपूत जाति ने क्या ठान रक्खा है कि वह करवट भी नहीं बदलती मानों मुर्दों से बाज़ी ले जाने के लिये तैयारी कर रही है। कई जातियां जो पहिले इस जाति को मान दिया करती थीं अब इसको तिरस्कार की नज़र से देखती हैं किन्तु न मालूम इसके भाग्य में क्या लिखा है कि यह इस दयामय आनन्द समय में अब भी उन्नति करने का विचार नहीं करती। इसने धन, धरा, धर्म्म सब कुछ खो दिया। अब इसके पास क्या है जो यह खोने को तयार बैठी है। कुछ भी हो भारत का कल्याण बिना इस जाति की उन्नति के नहीं हो सकता। इस कारण इसको इसके सच्चे शुभचिंतक जगा रहे हैं। उच्च स्वर से कहते हैं कि:—

हे क्षत्रियो! सोचो तनिक, तुम आज कैसे हो रहे,
हम क्या कहें, कह दो तुम्ही, तुम आज जैसे हो रहे।
स्वाधीनता सारी तुम्ही ने है खोई देश की?
बन कर विलासी, विग्रही नैया डुबोई देश की!

निज दुर्दशा पर आज भी क्यों ध्यान तुम देते नहीं?
अत्यन्त ऊंचे से गिरे हा! किन्तु तुम चेते नहीं!
अब भी न आँखें खोल कर क्या तुम विलोकोगे कहो?
अब भी कुपथ की ओर से मन को न रोकोगे कहो?

वीरो! उठो, अब तो कुयश की कालिमा को मेट दो,
निज देश को जीवन सहित तन, मन तथा धन भेट दो।
रघु राम भीष्म तथा युधिष्ठिर सम न हो जो ओज से॥
तो वीर विक्रम से बनो, विद्यानुरागी भोज से॥

बन्धुओ! अंगरेज़ राज्य को पाकर भी न जगे तो कब जगोगे। अब मूर्खों के प्रचंड शासन के दिन गये। विद्या की पुनः चर्चा फैल चुकी है और सब को सब कुछ कहने सुनने का अधिकार मिला है। देश २ से नई २ विद्या और कारीगरी आई हुई है। अतएव अब तो अपनी राजपूत जाति की और "जन्मभूमि जननी" के नाते से देश की उन्नति करते हुए चलो:—

Let us then be up and doing,
With a heart for any fate,
Still achieving, still pursuing,
Learn to labour and to wait.

देखो आनरेबल मिस्टर ओडायर ने भी मध्य भारतीय राजपूत हितकारिणी सभा के महोत्सव में भाषण देते हुए सन् १९११ ई० में राजपूतों का ध्यान ज़माने की रफ्तार की तरफ दिला कर उत्साहित

किया है। क्या हम आशा कर सकते हैं कि आप उसकी तरफ ध्यान देकर जाति व देश की उन्नति में सहायक होंगे। उनका वह प्रभावशाली भाषण हिन्दी अनुवाद सहित इस प्रकार है:—

Your Highness and Gentlemen:

The age is one of progress and of rapid development in many directions—Political, Social, Educational from which you cannot, even if you so desire, entirely stand aloof. The old ideal of the Rajput, was that like the ancient Persian he should learn three things, "to ride, to shoot and to speak the truth." These are excellent ideals, but while clinging tenaciously to them you should not shut your eyes to what is going on in the world around you. Even here in India you will see great movements afoot. The Mohammedan community forgetting all sectional differences is setting a fine example of union and Public spirit in the scheme for the creation of a Mohammedan University at Aligarh. A parallel scheme is to establish a Hindu University at Allahabad or Benares is receiving influential support from many leaders of Hindu society. In your own Rajput community you have heard of the eloquent appeal lately made by His Highness the Maharajah of Jammu and Kashmir which has been brought to the notice of several of your Chiefs, for a united effort to establish a Central Rajput College as a memorial to His late Majesty (King Edward VII).

On all sides we see a desire for progress for learning, for increased knowledge but combined with determination to associate such progress and knowledge with the best ideals and traditions—social and religious—of the community in question. It seems to me that your association can render great assistance to the Rajputs of Central India in the movement by steadily removing social abuses and social evils and thus contributing to the improvements and regeneration of the illustrious Rajput race.

श्रीमान् महाराजा साहब व सभ्यगण !

यह उन्नति का समय है और राजनैतिक, सामाजिक शिक्षा सम्बन्धी सब विषयों में शीघ्रता से तरक्की हो रही है। जिस से यदि आप चाहें तो भी सर्वथा अलग नहीं रह सकते। राजपूत जाति का पुराने ईरान वालों की भांति प्राचीन आदर्श यह रहा है कि राजपूतों को सब से पहले तीन बातें—अश्वारोहण (घुड़सवारी), शस्त्र संचालन व सत्य भाषण—सीखनी चाहिये। यह सिद्धान्त अच्छा है परन्तु इस सिद्धान्त पर दृढ़ता पूर्वक आरूढ़ होने के साथ साथ आपको संसार में आपके चारों ओर जो कुछ हो रहा है उसकी ओर से भी आंखें बंद न कर लेना चाहिये। देखिये इस समय यहां भारतवर्ष में ही कैसे आन्दोलन हो रहे हैं। मुसलमान लोगों ने सब जातीय विभेद त्याग कर अलीगढ़ में मुसलमान यूनिवर्सिटी स्थापित करने के लिये एकता और सार्वजनिक उत्साह का अच्छा उदाहरण उपस्थित किया है। इसी प्रकार की हिन्दू युनिवर्सिटी (विश्व विद्यालय) प्रयाग या काशी में स्थापित करने के लिये हिन्दू जाति के बहुत से नेता भी अच्छी सहायता दे रहे हैं। आपने सुना होगा कि आप की राजपूत जाति मे भी श्रीमान् हिज हाईनेस महाराजा साहब जम्मू व काशमीर ने

अपने स्वर्गवासी सम्राट् महाराजा एडवर्ड सप्तम के स्मरणार्थ "सेन्ट्रल राजपूत कालिज" स्थापित करने को सम्मिलित उद्योग के लिये प्रभाव जनक अपील की है, जो कि आप के कितने ही राजा महाराजाओं के दृष्टिगत भी हुई है। चारों ओर हम देखते हैं कि लोगों में उन्नति और शिक्षा की अभिरुचि उत्पन्न हो रही है। परन्तु साथ ही ऐसी उन्नति और शिक्षा में सर्वोत्तम जातीय आदर्श की बातें और वंश परम्परागत कथाऐं भी जो कि सामाजिक व धार्मिक हों, सम्मिलित रहनी चाहिये।

मैं समझता हूं कि आपकी सभा मध्यभारत (मालवा) के राजपूतों में से सामाजिक कुरीतियो को स्थायी रूप से दूर करके इस आन्दोलन में उनकी बड़ी सहायता कर सकती है और इसी प्रकार की सहायता से आपकी प्रसिद्ध राजपूत जाति की उन्नति और पुनरुत्थान होगा।

पाठको! देखें वह दिन कब आयगा जब क्षत्रियगण अविद्या, मिथ्या अभिमान लोभ और आलस्य को सावधानी-पूर्वक त्याग कर धैर्य्य उत्साह तथा ऐक्य के पवित्र उपदेशों को मन में रख अपने आचार और व्यवहार से संसार को बता देंगे कि हम अपने पूर्वजों को लजाने वाले नहीं हैं किन्तु मनु महाराज के कथनानुसार:—

प्रजानां रक्षणं दान मिज्याध्ययन मेवच।
विषयेष्व प्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः ॥१-८८*

इस क्षत्रिय धर्म को पालन करने वाले उनके सच्चे सुपुत्र हैं।

---

* अर्थात् प्रजा की रक्षा करना (यह नहीं कि प्रजा से कर लेकर मौज उड़ाने और चापलूसी करने में खर्च करें और उनके सुशिक्षा और सुधार मे न लगावें) दान देना (परन्तु उन्ही को जिन्हें जरूरत है न कि मुफ्तखोरों और

जिस प्रकार अपने बल से और पुरुषार्थ से दूसरों की और अपनी रक्षा करने वाले का नाम प्राचीन शास्त्रों में "क्षत्रिय" लिखा है ठीक वैसे ही प्रजा के रंजन (खुश) करने की योग्यता रखने वाले को "राजा" कहा है जैसा कि "राजा प्रकृति रंजनात"। इस वाक्य से प्रकट होता है। और भी "राजते राज्यते वा राजा। सम्यग राजते इति सम्राट्"। जो प्रजाओं के बीच बल वीर्य से सूर्य्य की तरह चमकता हो और प्रजा

सड मुसडों को दान देना सर्वथा ही निन्दनीय है। जैसा कि विदुर महाराज का उपदेश है:—

" दरिद्रान् भर कौन्तेय माप्रयच्छेश्वरे धनम् ।
व्याधितस्यौषधि पथ्यम् नीरुजस्य किमौषधै " ॥

हे युधिष्ठिर ! तू सदा दरिद्रों का पेट भरने का यत्न किया कर जो स्वयं मालदार और शक्तिशाली हैं उन्हें दान देने से क्या लाभ है ? जो रोगी है औषधि उसी को मिलनी चाहिये, नीरोग मनुष्य को औषधि देने वाला वैद्य बुद्धिमान नही कहाता।

विशेश कर विद्या दान पर ध्यान देना चाहिये क्योंकि "सर्वेसामेव दानानाम् ब्रह्म दानम् विशिष्यते।" अर्थात (विद्या दान सब दानों से बढ़ कर है) यज्ञ करना (न कि प्रातःकाल अग्निहोत्र से वायु को शुद्ध करने के बजाय सिग्रेट हुक्का के जहरीले धुवें से अपनी तथा सह वासियों की हानि करना) विद्या पढ़ना। यह नहीं कि (धन ओहदे के घमंड में उर्द के आंट की तरह ऐंठे रहना और विद्या पढ़ना फ़िजूल समझना) विषय वासनाओं में लीन न होना (यानी वेश्या आदिकों के जाल में पड -पतगे की मौत न मरना)। मनुजी ने क्षत्रियत्व के कारण उपरोक्त बताये हैं।

के कामों में तत्पर हो उसे राजा या सम्राट् कहते हैं। गौत्तम सूत्र के अध्याय ११ में लिखा है कि राजा का वचन और कर्म्म पवित्र होना चाहिये उसे त्रयी विद्या (वेद) तथा तर्क शास्त्र में निपुण शुद्ध और जितेन्द्रिय होना चाहिये। उसे ऐसे साथियों (मंत्रियों) से घिरा रहना चाहिये जिनमें उत्तमोत्तम गुण तथा राज्य शासन बनाये रखने की शक्तियां हों। उसे साधन सम्पन्न होना चाहिये तथा अपनी प्रजा के साथ निष्पक्ष वर्तना चाहिये। और उन्हें लाभ पहुँचाना चाहिये। इस प्रकार अपने कर्त्तव्य पालन से राजा का यह लोक तथा परलोक दोनों सफल हो जाते हैं अर्थात् वह दोनों लोकों के सुखों का भागी बनता है। इसी से हमारे राजपूत नरेशों का कर्त्तव्य है कि वे जहां तक हो सके अपने कर्त्तव्यों का ध्यान रखें। वास्तव में प्रजारंजन से बढ़ कर राजा का कोई दूसरा धर्म नहीं। यदि राजा अपनी प्रजा का रंजन नहीं करता तो वह अपने कर्त्तव्य याने धर्म से गिरा हुआ है। प्रातःस्मर्णीय महाराणा प्रताप के मोटो यानी आदर्श ("जो दृढ़ राखे धर्म को, तेहि राखे करतार") के अनुसार संसार का कर्त्ता परमात्मा उसी राजा की रक्षा करता है जो अपने धर्म पर दृढ़ रहता है। ऐसे पाप भीरु प्रजारंजक राजा के विषय में ऋग्वेद में लिखा है कि—

राजा राष्ट्राणां पेशः ॥ ऋ० ७-३ म०

राजा हि कं भुवनाना मभिश्रीः ॥ ऋ० १-७८

"राजाही राष्ट्र–देश की शोभा है"। अर्थात् जो राजा प्रजा का रंजन करता है वह राष्ट्र की शोभा बढ़ाता है। इस प्रकार का राजा किस आधार पर रहता है वह तैत्तरीय ब्राह्मण में लिखा है :—

विशि राजा प्रतिष्ठितः ॥ तै० ब्रा० २

"प्रजा के आधार पर राजा रहता है"। इस विषय के और भी सहस्त्रों प्रमाण वेदों में रामायण में और महाभारत आदि प्राचीन ग्रंथों में मिलते हैं। यदि राजा लोग अपने कर्त्तव्यों की तरफ ध्यान देने लगें तो उनकी प्रजा का ध्यान खुद बखुद अपने कर्त्तव्य की तरफ खिंच जायगा। जैसा कि महर्षि याज्ञवल्क्य ने लिखा है कि :—

राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठाः पापे पापाः समे समाः।
प्रजास्तदनुवर्त्तन्ते यथा राजा तथा प्रजा ॥

"राजा के धर्मात्मा होने से प्रजा भी धर्मात्मा बन जाती है और राजा के पापी होने पर प्रजा में भी पाप फैल जाता है। प्रजा हमेशा राजा के पीछे चलती है और जैसा राजा होता है वैसी प्रजा हो जाती है।" इस बात को प्रसिद्ध लेखक मिस्टर क्लाडियन ने इस प्रकार प्रकट किया है:—

The people are fashioned according to the example of their king and edicts are of less power than the model his life exhibits.

—Claudian.

मुग़ल सम्राट् जहांगीर ने अपने "जहांगीर नामा" में एक स्थान पर लिखा है कि—

"राजा को यथा समय कर (टैक्स) देना जिस प्रकार प्रजा का कर्त्तव्य (फ़र्ज़) है उसी प्रकार प्रजा की सुरक्षा करना राजा का प्रधान धर्म है। मैंने बड़ी २ सड़कें बनवाईं और उन पर पेड़ लगा कर बटोहियों के कष्ट निवारण का उपाय किया, परन्तु ऐसे छोटे छोटे कामों में मेरा कर्त्तव्य पूरा नहीं होता। प्रजा के हित की अभी तक जो बातें मैंने नहीं कीं और जो मुझ से हो नहीं सकतीं उन्हीं की जिम्मेदारी मुझ पर है। उन्हीं कठिन बातों को आसान कर दिखाना मेरा कर्त्तव्य है। ऐसे कामों के लिये अनुभवी, सदाचारी और पाप भीरु मंत्रियों को नियुक्त करना होगा। राजनीति में साफ़ लिखा है कि इस प्रकार के मंत्रियों की सलाह उचित है या अनुचित, इसका निर्णय जो नरेश स्वयं कर सकता है वही सिंहासन पर अधिष्ठित होने योग्य है। मैं परमेश्वर को साक्षी रख कर कहता हूं कि "हे दयामय! जिस प्रजा के राज्य का भार मुझ पर सोंपा गया है उसका निरन्तर कल्याण करते रहने की आप मुझे सुबुद्धि प्रदान करें। मंत्री–दीवान चाहे जैसे क्यों न हों प्रजा के सुख दुख की जबाबदेही राजा पर ही होती है। राज दंड राज मुकट या विशाल सम्राज्य राजा का सच्चा वैभव नहीं प्रजा का शान्ति सुख ही राजा का सच्चा ऐश्वर्य्य है। जिस राजा की प्रजा सुखी हो वही राजा छोटा होने पर भी संसार में सर्वोत्तम–सर्वश्रेष्ठ है। इसी तत्व के अनुसार अपनी शक्ति भर मैं प्रजा के कल्याण की चेष्टा किया करता हूं और उमर भर करता रहूंगा।"

इसी विषय में अंग्रेज़ी के विख्यात कवि और नाटककार शेक्सपियर ने लिखा है कि––

"King–becoming graces—are justice, verity, temperance, stableness, bounty, perseverance, mercy, lowliness, devotion, patience, courage and fortitude."

न्याय, सत्यता, व्यसनहीनता, दृढ़ता, उदारता, गुणग्राहकता, दया, नम्रता, भक्ति, धैर्य्य, शूरता और पराक्रम-ये राजा के मुख्य गुण हैं।

महाभारत के शान्तिपर्व में राजधर्म कहते समय राजर्षि भीष्म पितामह, सम्राट् युधिष्ठिर आदि से कहते हैं—

वर्तितव्यं कुरुश्रेष्ठ सदा धर्मानुवर्तिना।
स्वप्रियन्तु परित्यज्य यद्यल्लोकहितं भवेत॥

"हे युधिष्ठिर! सदा धर्म से प्रजा को वर्त्तना। यदि आगे प्रजा का हित होता हो तो अपना हित न देखना तात्पर्य यह है कि यदि अपनी हानि होती हो तो भी राजा का कर्त्तव्य है कि वह प्रजा का सदा कल्याण करे।"

भारत की यह राजनीति सब देशों तथा सब कालों में सब तरह से उत्तम पाई गई है। प्रख्यात अंग्रेज़ कवि मिल्टन लिखता है—

"Aristotle and the best of Political writers have defined a king as one who governs to the good and profit of his people and not for his own ends."

"सिकन्दरे आजम के गुरु पंडितवर अरिस्टोटल और राजनीति के विषय में लिखने वाले बड़े बड़े विद्वान् भी उसको ही राजा कहते हैं जो स्वार्थ के लिये नहीं किन्तु अपनी प्रजा के सुख और लाभ के लिये राज्य करता है।"

बृहत् पाराशर स्मृति में लिखा है कि—

"सदा प्रजाहितेयुक्तः पूज्यो नाकेऽप्यसौ नृपः"

"जो राजा प्रजा के हित के लिये सदा तत्पर रहता है वह स्वर्ग में भी पूजा जाता है।" परन्तु अकेला राजा अपने राज्य के भार को पूरी तौर से नहीं उठा सकता इसलिये उसको चाहिये—

श्रुताध्ययन सम्पन्ना धर्मज्ञाः सत्यवादिनः।
राज्ञा सभासदः कार्या रिपौ मित्रे च ये समाः॥

—याज्ञवल्क्य ऋषि

"राजा ऐसे मनुष्यों को अपना मंत्री बनावे जिन्होंने बहुत सुना हो, बहुत पढ़ा हो, जो अपने धर्म के जानने वाले हों और मित्र शत्रु को समान समझ कर इन्साफ़-न्याय करने वाले हों।"

मौलान् शास्त्रविदः शूरान् लब्ध लक्षान् कुलोद्गतान।
सचिवान सप्त चाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान॥

—मनु० ७-५४

"जिनका जन्म उसी देश में हुआ हो, जो वेद आदि शास्त्र के ज्ञाता हों, शूर हों, अपने उद्देश्य-उसूल से कभी भ्रष्ट न हों, अच्छे कुल के हों सुशिक्षित हों, सुपरीक्षित धर्मवान, सद्गुणी तथा विचक्षण हों ऐसे सात या आठ मनुष्यों को अपना मंत्री चुनना उचित है।"

इसी विषय में इंग्लैंड के महाकवि मिल्टन ने अपनी सम्मति इस प्रकार दी है—

"Deep on his front engraven, deliberation sat,
And public care and princely counsel,
In his face shone majestic."

अर्थात् जिनके मुख ही पर विचार और लोक चिन्ता विराज रही हो और जिनके दिखाव में ही राज्य चिन्ता की झलक हो ऐसे कारवारी–मुसाहिब चाहिये।

आगे इसी विषय की जगद् विख्यात कवि पोप की एक बहुत ही सुन्दर और हृदयग्राही कविता पाठकों के अवलोकनार्थ अनुवाद सहित दी जाती है:—

"Statesman, yet friend to truth! of soul sincere,
In action faithful, and in honour clear,
Who broke no promise, served no private end,
Who gained no little and who lost no friend;
Enabled by himself, by all approved,
Praised, wept and honoured by the muse he loved."

जिसे सत्य से स्नेह है जिसकी अन्तरात्मा शुद्ध और सच्ची है। जिसको कर्त्तव्य का यथावत् ज्ञान और परायणता है। और जिसका समुज्ज्वल यश है, जो प्रतिज्ञाओं के पालन में सुदृढ़ है और जिसका निजी कोई स्वार्थ नहीं है जो किसी पद का अभिलाषी नहीं है, और जिसका कोई भी मित्र विमुख नहीं है। जो अपने शुभ कर्म्मों द्वारा ही उन्नति करता है और जिसकी सभी लोग प्रशंसा करते और संसार में शरीर छुटने पर उसकी प्रिया कविता कलाप जिसके लिये विलाप करती है। धन्य है वह राज्य सचिव वही सच्चा राजनीतिज्ञ है।

परन्तु ऊपर लिखे गुणों वाले मंत्री-दीवान बहुत कठिनता से मिलते हैं। इसीसे कई देशी राज्यों में योग्य कार्य्यकर्त्ताओं के न होने से भारी हानि हुई है और हो रही है। अज्ञानी और स्वार्थी-कूटनीतिज्ञ कारवारियों की मूर्खता से बड़े २ देशी राज्य बिगड़ गये। देशी कला कौशल, देशी गायन, देशी कारीगरी देशी खेतीबाड़ी और देशी बातें जिनके कारण प्राचीन समय में भारतवर्ष की बड़ी ख्याति थी वे सब इस देश से चली गईं। यह असाधारण हानि देशी कारवारियों के योग्य न होने से ही हुई। पहिले देशी राज्यों में योग्य और दूरदर्शी अहलकार थे इसलिये देश उस समय आज से अधिक सुखी था। दूध घी की नदियां बहती थीं। अतएव जहां तक हो योग्य देशी कार्यकर्त्ताओं के मिलते हुये नाहक ही परदेशी को राजकाज न सौंपा जाय जैसा कि राजर्षि भीष्म पितामह ने महाभारत के शान्ति पर्व में कहा है कि—

आगन्तुश्चानुरक्तोपि काममस्तु बहुश्रुतः।
सत्कृतः संविभक्तो वान् मंत्र श्रोतुमर्हति॥
कृतप्रत्ययश्च मेधावी बुधो जानपदः शुचिः।
सर्वं कर्मसु यः शुद्धः स मंत्रं श्रोतुमर्हति॥

"राजा एक विदेशी को चाहे वह राजा का भक्त ही हो और विद्वान् भी हो, उसकी प्रतिष्ठा करे और उसका भरण पोषण करे परन्तु राजकाज में उसकी सलाह न लेवे। राजा को चाहिये कि एक स्वदेशी जो विद्वान् हो बुद्धिमान पवित्रात्मा हो और सत्यवादी हो राज कार्य्य में उसकी सलाह लेवे"।

पार्लियामेण्ट का जन्म पहले भारतवर्ष में ही हुआ था। यह उस समय की बात है जिस समय देशी राज्यों का संचालन प्रजा की इच्छा के अनुसार होता था। अर्थात् उस नीत पर चलते थे जिस नीत पर आजकल अंगरेज़ राज्य चलता है। उस समय विद्वान् ब्राह्मण, शूरवीर क्षत्रिय और धुरंधर व्यौपारियों में से योग्य पुरुष-प्रजा प्रतिनिधि-राज्य सभाओं में इकट्ठे होकर यथार्थ चर्चा करते और बड़े विचार के साथ देश काल, पात्र के अनुसार नियम बनाते थे। राजा को उनकी मर्यादा और विचार की रक्षा करनी पड़ती थी। ऐसे उदाहरणों से भारत का इतिहास भरा पड़ा है। पुरानी बातों को छोड़ कर हम मुग़ल जमाने की ही कहते हैं कि महाराणा उदयसिंह के पहाड़ों में चले जाने पर भी प्रजा और जागीरदारों ने चित्तौड़ पर स्वतन्त्रता के लिये अपना रक्त बहा कर मेवाड़ के गौरव की रक्षा की थी। महाराणा अमरसिंह की इच्छा न होने पर भी जनता ने उनको लड़ाई में जाने के लिये मजबूर किया था। ऐसी और भी कई घटनाऐं मिल सकती हैं।

राजा और प्रजा दोनों का कल्याण इसी में है कि देश में चिर शान्ति के लिये सुशासन हो और राजा व प्रजा में पारस्परिक पूर्ण प्रेम हो। राजा प्रजा के साथ सन्तान तुल्य लाड़ प्यार-स्नेह रखें और प्रजा राजा को पितृवत् या पितृ स्थानीय समझें। जहां ऐसा

होता है वहां राजा प्रजा दोनों में से किसी को अशान्त और चिन्तित होना नहीं पड़ता।

आज राजा प्रजा के प्राचीन सम्बन्ध में बहुत कुछ अन्तर आ गया है। न राजा प्रजा का विचार रखते हैं और न प्रजा जन अपने मन मौजी राजाओं की अधिक परवाह करते हैं। एक के प्रेम से दूसरे के हृदय में भी प्रेम उत्पन्न होता है। यदि आज भी किसी राजा के हृदय में प्रजा हित की कामना होती है तो उसकी प्रजा उसे सच्चे हृदय से चाहने लगती है। देशी राज्यों में आज भी प्रजा अपने राजा की हृदय से शुभ कामना करती है। वही पुराने संस्कार आज भी वहां की प्रजा के हृदय में बने हुए हैं। परन्तु खेद है कि अब देशी राज्यों में बहुधा वहां के राजाओं की लापरवाही से और स्वार्थी धूर्त राजकर्मचारियों की कृपा से प्रजा बड़ी संकट में पड़ी है और उसकी उचित प्रार्थनाओं की शीघ्र सुनवाई नहीं होती। देशी राज्यों के सम्बन्ध में भी अंग्रेज़ सरकार की प्राचीन नीति अब बदल गई है और हम इसको देशी राज्यों के लिये लाभदायिनी होने से अच्छा ही समझते हैं। परन्तु देशी राज्यों को पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही अपने कर्त्तव्य पालन का भी पूर्ण ध्यान रखना चाहिये। यदि प्रजा के प्रति राजाओं की ऐसी ही लापरवाही रही तो फिर या तो गवर्नमेंट को देशी रजवाड़ों के राज शासन में हस्तक्षेप करना पड़ेगा या प्रजा विप्लव खड़े हो जायँगे।

किसी २ देशी राज्य में जहां पुराने ढंग का प्रबन्ध है और योग्य निरीक्षक कोई है नहीं वहां ऐसी रजवाड़ी पोल है कि देख सुन कर आश्चर्य होता है। जो बात एक दफ़ै किसी विशेष आवश्यकता से प्रचरित हुई फिर वह कभी बन्द नहीं होती। बहुधा पुराने ढंग के रईसों की रियासतों—जागीरों में ऐसा देखा गया है। वहां पर पुराने दस्तूर की बातें पुराने कागजों में देखी जाया करती हैं। किसी रईस के यहां कोई महमान गरमी के मौसम में गये तो उनके आतिथ्य सत्कार के लिये वैसा ही सामान पुराने कागजात में देख कर जाड़े के मौसम में भी भेजा जाता है। इन पिछड़ी (Backward) रियासतों के नरेशों को चाहिये कि समय देख कर शासन सुधार करें। यदि राजा लोग प्रजा को सन्तुष्ट रख सकें तो वह भी किसी के बहकाने में न आवेगी। जहां गड्ढा होता है पानी वहां ही मरता है। किन्तु निरा दोष नरेशों और जागीरदार जमीन्दारों का ही नहीं है। प्रजा भी अब पहले जैसी नहीं रही। समय की गति को देख कर वह भी चतुर और चालाक होती जाती है। परन्तु प्रजा का भी यह आवश्यक कर्त्तव्य है कि वह अपने नरेश की आज्ञाओं का पिता की आज्ञाओं के समान ही पालन करे और अपने दुःख दर्दों को अपने राजा के सामने उसी तरह पेश करे जैसे कि एक आज्ञाकारी पुत्र अपने पिता से अपनी आवश्यकताओं (मांगें—Necess & demands) का निवेदन करता है।

पूर्व क्षत्रिय नरेशों का राज्य भारतवर्ष में लाखों वर्ष इसी कारण रहा कि वे राजधर्म का पालन पूर्णतया करते रहे। कलेजे के टुकड़े अपने पापी पुत्रों को भी पाप करने पर बिना दंड दिये न छोड़ा। भरत और सगर ने अपने अन्यायी पुत्रों को कठोर दंड देकर प्रजा को संतुष्ट किया था। छत्रपति शिवाजी ने अपने राजकुमार को किसी की धर्म्म पत्नि के साथ बलात्कार सहवास करने पर कारावास (जेल) का दंड दिया था। ऐसे ही पुराने क्षत्रिय नरेशों के चरितों से पता चलता है कि अपनी प्रजा के रक्षार्थ घूम घूम कर लोगों के सुख दुःख जानना राजा लोग अपना परम कर्त्तव्य समझते थे। वीर विक्रम तथा भोज के विषय में इस प्रकार की कितनी ही कथाएँ प्रसिद्ध हैं। यही नहीं मुसलमान बादशाह जहांगीर ने भी अपने महल में एक घंटी लगा रक्खी थी। प्रजा के लोग अपनी प्राथना सुनाने के लिये महलों के बाहर लगी हुई जंजीर को खींच लेते थे जिससे घंटी बज उठती थी और उसका शब्द सुन सम्राट् जहांगीर बाहर आकर दुःखितों की करुणकथा बड़े ध्यान से सुनते थे। किन्तु अब वह समय नहीं है। राजा और प्रजा में परस्पर पिता पुत्र का सा प्रेम नहीं रहा। इसी कारण प्रजा के दुःख और दुर्दशा की बात सुनने का देशी नरेशों को न ध्यान है और न अवकाश है। बहुतेरों में अपनी रियासत, जागीर (ठिकाना) या जिमीन्दारी के प्रबन्ध की योग्यता ही नहीं है। उनके मुख्य २ कर्मचारी जैसा उनको समझा

देते हैं वैसा ही वे करने लगते हैं। जहां उनकी ऐसी शोचनीय दशा है वहां सुप्रबन्ध की क्या आशा हो सकती है। और वे प्रजा के सुख दुःख का क्या विचार रख सकते हैं। हमारा प्रजा के प्रति कर्त्तव्य पालन का यह नम्र निवेदन उन्हीं राजा रईसों जागीरदारों व जिमीदारों से है जो विचारशील हैं और अपना कर्त्तव्य पालन की योग्यता रखते हैं।

मुसलमान सम्राट् शाहजहां हिन्दू और मुसलमान प्रजा दोनों के साथ बड़ा ही प्रेमभाव रखता था। इस कारण हिन्दू प्रजा उसे पूज्य दृष्टि से देखती थी सम्राट् शाहजहां को अपनी बेगम मुमताज महल जिसके नाम से आगरा में जगद्विख्यात आश्चर्यकारी "ताज बीबी का रोजा" बना है की अकाल मृत्यु पर महान शोक हुआ था। इस अपनी प्राणप्यारी बेगम की मृत्यु पर एक सप्ताह तक उक्त मुसलमान शाहनशाह अपने राज काज को बिलकुल न देख सका था और उसने यह कहा था कि "यदि राज्य का पवित्र उत्तरदायित्व (जिम्मेवारी) जिसको कोई अपनी इच्छा से नहीं छोड़ सकता-मेरे सिर पर न होता तो मैं फकीर हो जाता।"

इस एक बात से ही हमारे देशी राज्यों के मा-बाप (नरेश) समझ सकते हैं कि उन पर राज्य की कितनी जिम्मेवारी है। जो राज्य भार ग्रहण करते समय उस की जिम्मेवारी को लेते हैं उनको कभी राज काज से निश्चिन्त या असावधान न होना चाहिये।

प्रातःस्मरणीय श्रीमती राजराजेश्वरी महाराणी विक्टोरिया ने भी अपने घोषणापत्र में कहा था कि "प्रजा के सुख में मेरा सुख और दुःख में मेरा दुःख है।" वास्तव में प्रजा पर उनका ऐसा ही प्रेम-भाव था और इसलिये प्रजा भी सदैव उनके प्रति पूर्ण राजभक्ति दिखाती रही और उनके राज्यकाल में भारत प्रजा सर्वथा संतुष्ट और सुखी रही।

जहां राजा और प्रजा में इस प्रकार का सम्बन्ध हो वहां राजा से लेकर देश के प्रत्येक मनुष्य का यह कर्त्तव्य होना चाहिये कि जिस देश में वो पैदा हुआ है—जिस देश की मिट्टी से उसका शरीर बना है उसके प्रति उसका कुछ कर्त्तव्य (जिम्मेदारी) अवश्य ही है। कर्त्तव्य का पालन करना उसी उत्तरदायित्व जिम्मेदारी को बराबर निभाना ही सच्ची देश भक्ति Patriotism कही जा सकती है। देशवासियों के हृदय से हृदय मिला कर प्रेम-एकता भाव का प्रचार करना ही देश के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करना है। यह ही सच्ची देश-भक्ति है। देश के मुर्दे हृदयों को जिलाना उनमें मनुष्यता लाना ही देश-भक्ति का कार्य करना हर मनुष्य का सबसे पहिला कर्त्तव्य है। पर भारत के दुर्भाग्य से यहां स्वदेश-भक्ति बुरी तरह वर्ती जा रही है। स्वदेश-भक्ति राजविद्रोह नहीं राज-भक्ति है। स्वदेशप्रेम करना जहां हर मनुष्य का परम-धर्म है वहां राज-विद्रोह Anarchism करना बड़ा ही भयंकर पाप है। फिरे दिमाग़ के कारण कुछ लोगों में यह

धुन समाई हुई है कि सरकार (राज) के विरुद्ध अंड-बंड कुछ का कुछ लिख मारना या बक देना ही स्वदेश-भक्ति है पर हम कहते हैं कि वे सख्त ग़लती पर हैं राजा और प्रजा में प्रेम करवाना ही स्वदेश-भक्ति है क्योंकि इससे देश में शान्ति विराजती है और लोग सुखपूर्वक अपने २ कार्य निर्वाह करते हैं।

आज कल देशी राजाओं का समय और धन लड़ाई झगड़े युद्ध आदि में खर्च नहीं होता, सेना का खर्च नाम मात्र को रह गया है, विद्या प्रचार के लिये छापाखाना, रेल, तार, डाक आदि सब सामान मौजूद हैं। सम्राट् पंचमजार्ज के छत्र तले सब की रक्षा होती है। इससे देशी राज्यों में परस्पर में ईर्षा द्वेष से युद्ध होने की कोई सम्भावना नहीं है। क्षत्रियों को मुख्य कर विद्या, ज्ञान और सद्गुण शृंगार धारण कर अविद्या, अज्ञान और दुर्गुण का विनाश करना चाहिये ऐसा शान्ति का समय बड़ी ही कठिनता से हम राजपूत क्षत्रियों को प्राप्त हुआ है। अतः देश की वर्त्तमान अवस्था में देशी नरेशों का पहला कर्त्तव्य यह है कि वे समय की रफ्तार पर ध्यान रख अपना और प्रजा का कल्याण करने में मन लगावें क्योंकि अब देशी राज्यों की प्रजा में भी जागृति के भाव फैल रहे हैं वह भी अपने जन्मसिद्ध हक़ हकूक़ और अधिकार समझने लगी है। देशी राज्यों के स्वामियों कोभी अपने कर्त्तव्य पालन का विशेष रूपसे विचार करना चाहिये। अब गड़बड़ का समय नहीं रहा। अपने इस कथन को

पुष्टि में सेण्ट्रल इंडिया (मालवा) के एजेण्ट गवर्नर जेनरल आनरेबल मिस्टर बेविल साहब बहादुर का निम्न कथन देते हैं:-

"One thing is clear, the States cannot remain aside, the Reforms will react on them. Hitherto acts of the rulers of the States have been accepted without question but the time is coming when each ruler will have to give to subjects good reasons for his acts. He must learn to lead them and carry them with him along the road of reform, gradually taking them more and more into confidence and associating them with himself in the conduct of affairs."

—Col. Beville, A. G. G. in C. I.

यह बात साफ है कि अब रियासतें अलग नहीं रह सकतीं बल्कि नवीन सुधारों का उन पर भी बड़ा प्रभाव पड़ेगा। अभी तक तो रियासतों के नरेशोंके काम पर कोई सवाल नहीं उठाया गया और जैसा था मान लिया गया मगर अब वह समय समीप आरहा है जब कि हरएक शासक को अपने काम का यथोचित कारण प्रजा को बताना होगा। उसको चाहिये कि वह उनका नेता बने और उन्हे सुधार के रास्ते पर ले चले और धीरे धीरे उनको अपना ज्यादा २ विश्वासपात्र बनावे और काम करने में उनको अपने साथ रखे।

२६ नवम्बर सन् १६२० ई० को श्रीमान् वाइसराय लार्ड चेम्सफोर्ड ने भी बीकानेर के राज दरबार में इसी प्रकार के विचार अपने भाषण में प्रकट किये हैं:—

"Not through any deliberate act of Government but by the inevitable law of progress the peoples of the Indian States will be drawn into ever closer contact with those of British India. The effect of this tendency will be on the one hand a greater opportunity for the Indian Princes to take their place as the natural leader of the people, and on the other a growing a public demand for the application of the principles of progress to the Government of the Indian States. However we may be tempted to regret the passing of much that is picturesque and attractive in the old world isolation of the Rajputana States, no wise Ruler will shut his eyes to the logic of facts or fall to prepare for what is surely coming. Fortunate is the State where the administration to fear from public scrutiny and where change comes as a gradual development from within and not by an unwilling surrender to the superior force of public opinion."

"बृटिश गवर्नमेण्ट की जान बूझकर की हुई कार्य्यवाही से नहीं लेकिन उन्नति के अचूक नियम के अनुसार अब देशी रियासतों की जनता का बृटिश भारत की जनता के साथ नित्य अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध होता जायगा। इसके दो परिणाम होंगे। एक तो यह कि देशी नरेशों को बृटिश भारत की जनता के पथ-प्रदर्शक (नेता) बनने का अवसर मिलेगा*

* लाट साहब ने देशी राज्यों के नरेशों को बृटिश भारतकी प्रजा के पथ-प्रदर्शन के लिये कहा है सो कुछ देशी राज्यों के अधीश्वरों को छोड़ कर शेष इस काम के योग्य नहीं हैं। जो अपनी रियासतों का सुप्रबन्ध नहीं कर सकते, जो अपने मन्त्रियों के हाथ में रहते हैं वे क्या अंगरेज़ी अमलदारी की भारतीय प्रजा का पथ-प्रदर्शन कर सकेंगे? —लेखक।

और दूसरा यह कि इस बात की मांग नित्य बढ़ती जायगी कि रियासतों में भी उन्नति के सिद्धान्त के अनुसार शासन सुधार किये जायँ। राजपूताने की देशी रियासतों के संसार से अलग रहने मे जो विचित्रता और आकर्षण है उसके चले जाने पर हम चाहे पश्चात्ताप करते रहें किन्तु इस बात की कोई नरेश लापरवाही नहीं कर सकते। सुधार तो सभी रियासतों में होंगे परन्तु वे रियासतें सौभाग्यवान् होंगी जिनके नरेश लोकमत से विवश किये जाने के पहले ही अपने आप ही समयानुकूल सुधार करते जायँगे।"

जिस प्रकार आज वह समय नहीं रहा जो आज से १०-२० वर्ष पहले था उसी प्रकार आज का भी समय न रहेगा।

श्रीमान् भारत सम्राट् महाराजाधिराज पंचमजार्ज महोदय के पितृव्य ड्यूक-ऑफ़-कनाट जो उनके प्रतिनिधि रूप में कौंसिलों और नरेन्द्र मंडल (Ruling Prince's conference) **के खोलने के लिये सन् १९२१ में भारतवर्ष में आये थे तब उन्होंने मदरास कारपोरेशन के अभिनंदन पत्र का उत्तर देते हुये कहा था:—**

"भारत जो बड़ी शीघ्रता से अपनी उन्नति के मार्ग में आगे बढ़ रहा है उसके लिये भी हमें कम गर्व नहीं है। अब पुराना ज़माना गया। अब फिर वह आने को नहीं है। इस समय जो जो कार्य्य हो रहे हैं उनसे कोई भी हाथ नहीं खींच सकता। सभी देशों में ऐसे लोग हैं जो सार्वजनिक कार्य्य से मुंह चुराते हैं। ये लोग चाहते हैं कि हमारा बपौती अधिकार सदा क़ायम रहे और हमारे हाथ में सभी रहें।"

जब बृटिश गवर्नमेंन्ट के स्तम्भ रूप बड़े २ विद्वान् और राजनीतिज्ञों का भी ऐसा ख्याल है तब हमारे पिछड़े हुए देशी रजवाड़ों के नरेशों का कर्त्तव्य है कि वे अपने आलस्य को छोड़ कर अपने आश्रित प्रजा की उन्नति का उद्योग प्रारम्भ करें। साथ ही उन का यह कर्त्तव्य भी है कि वे अपने अधीनस्थ सरदारों का पूर्णतया विचार रखें। एक समय था जब कि इन्हीं उमरावों-सामन्तों के पूर्वजों के बाहुबल-सहायता और रक्तपात से राजपूताना व सैन्ट्रल इण्डिया तथा काठियावाड़ आदि की रियासतें संस्थापित हुईं तथा संरक्षित रहीं और एक समय आज है कि इनके साथ प्रायः यथोचित व्यवहार नहीं किया जाता। कोई कोई रईस तो किसी न किसी मिस से इनकी जागीरें तक छीन लेना चाहते हैं। जागीरदारों का अपने रईसों से, स्वामी और सेवक का सा ही सम्बन्ध नहीं है किन्तु आत्मीयता का भी सम्बन्ध है। एक ही पुरुषा का रक्त दोनों के शरीर में संचरित है। हम आशा करते हैं कि हमारे देशी राजा महाराजा अपने जागीरदारों के साथ सद्व्यवहार करने का पूरा ध्यान रखा करेंगे और जिस प्रकार राजा को अपने मातहत जागीरदारों का ध्यान रखना आवश्यक कहा गया है उसी प्रकार राजा और उसके जागीरदारों को अपनी प्रजा की सुख समृद्धि और व्यौपार वृद्धि का ध्यान रखना भी ज़रूरी है। जैसा कि भीष्मपितामह का महाभारत में उपदेश है:—

उपेक्षिता हि नश्येयुः गोमिनोऽरण्य वासिनः ।
तस्मात्तेषु विशेषेण मृदुपूर्वं समाचरेत् ॥

यदि राजा वैश्यों (व्यौपारियों) की परवाह नहीं करता है तो वे उसके राज्य को परित्याग कर जंगल में चले जाते हैं। अतएव राजा को उन से प्रेम पूर्वक व्यवहार करना चाहिये।

अजस्रमुपयोक्तव्यं फलं गोमिषु भारत ।
प्रभावयन्ति राष्ट्रं च व्यवहारं कृषिस्तथा ॥
—महा० भा० शा० ८७ का० ३८

हे भारत ! राजा वैश्यों के साथ ऐसा व्यवहार करे कि उनका धन माल बढ़ता ही जावे। वैश्यों से ही राजा का बल बढ़ता है और उन्हीं से देश की आय और कृषि (खेतीबाड़ी) बढ़ती है।

रक्षाऽभ्यधिकृता नाम तेभ्यो रक्षेदिमाः प्रजाः ।
विक्रयं क्रयमाध्वानं भक्तं च सपरिच्छदम् ॥

राजा को चाहिये कि क्रय, विक्रय, रास्तों की, भोजन की, वस्त्र की तथा व्यौपारियों के लाभ की दशा देख कर टैक्स (कर) राहदारी लगावे।

शिल्पं प्रतिकरानेवं शिल्पिना परिकारयेत् ।
उच्चावचकरा दाप्या महाराजा युधिष्ठिर ॥
—म० भा० शा० ८७-१५

हे युधिष्ठिर ! राजा कर (टैक्स) ले परन्तु उसे ऐसा कर कभी न लगाना चाहिये जिस से प्रजा दुःखित होवे।

कच्चित कृषिकरा राष्ट्रं न जहत्यति पीड़िताः।
ये वहन्ति धुरं राज्ञां ते भरन्तीतरानपि॥
—म० भा० शान्तिपर्व ८६-२३.

हे राजन्! इस बात पर ध्यान रखो कि तुम्हारे राज्य में जो व्यौपारी वाणिज्य की उन्नति के लिये अधिक या कम दाम पर माल मोल लेते हैं और जिन्हें अपने भ्रमण में जंगलों अथवा दुष्प्राप्य स्थानों में सोना या विश्राम लेना पड़ता है वे भारी कर (टैक्ट-लाग बाग) से दुःखित न होपावें।

जानीयुर्यदि मे वृत्तं प्रशंसन्ति न वा पुनः।
कच्चिद्रोयेज्जन पदे कच्चिद्राष्ट्रे च मे यशः॥

हे युधिष्ठिर! एक राजा को यह जानना चाहिये कि उसके आचरण से उसकी प्रजा प्रसन्न है या नहीं और अपने राज्य में उसे यश प्राप्त करने में सफलता हुई है कि नहीं।

इस समय के सभ्य संसार में एकस्त्रीव्रत धारण करने की प्रथा है और जो चक्रवर्ती सम्राट् इस समय भूमण्डल में रह गये हैं वे इसी नियम का पालन करते हैं। वास्तव में न्याय से मनुष्य के लिये कुदरती नियम है भी यही। भगवान् मनुजी भी आज्ञा देते हैं कि:—

तदध्या सोद्वहे यदार्यां लक्षणान्विताम्।
कुले महति संभूतां हृद्यां रूप गुणान्विताम्॥

अच्छे गुणवाली और श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुई (एक) स्त्री के साथ विवाह करे।

परन्तु हमने बहुत ही कम राजा रईस व जागीरदार धनी मानी सज्जन ऐसे देखे हैं जो इस नियम को पालन करने वाले (संयमी) हैं। नहीं तो अधिकांश इसके प्रतिकूल ही देखे हैं। यहां तक कि कोई रखेलियों (पासवान—पड़दायतों) को ही लिये हुए हैं तो कोई पातुरों—वेश्याओं को ही अपना सर्वस्व सौंप चुके हैं। उनकी विवाहिता ठकुराइन साहिबा या रानी साहिबा या वे जो कुछ भी हों, की दशा करुणा-जनक होती है। क्योंकि श्रीमान् उनकी कुछ सुध ही नहीं लेते। हम वचन पालने में तो इतने पक्के हैं कि विवाह में जो वचन स्त्री को देते हैं उनको फ़ौरन ही भूल जाते हैं। विश्व के गुरु-संसार शिरोमणि, जिस भारतवर्ष में दशरथ, शिवि, दधीचि, और हरिश्चन्द्र सरीखे क्षत्रिय वचन पालने वाले हो गये हैं उसी राजपूत जाति में आज ऐसे२ प्राणी नज़र आते हैं कि चार पांच महीने भी अपनी बात का पालन नहीं कर सकते। धन्य है! धन्य है!! इतिहासज्ञ साधु कर्नल टाड ने अपने राजस्थान इतिहास में लिखा है कि—"राजपूत जाति की हानि जितनी रखेलियों—दासियों ने की है उतनी वेश्याओं ने नहीं।" यह बात सर्वथा ही सत्य और निर्विवाद है। जैसा ज़ोर शोर इस प्रथा का राजपूताना में है उतना संयुक्तप्रान्त आदि में नहीं है। इस विषय का विस्तृत वृत्तान्त "राजपूत पत्र" के सन् १९१८ ई० के एक अंक में लिखते हुए किसी सुयोग्य लेखक ने इसका खाका खूब खींचा था। आज

भी वह दृश्य आंखों के सामने आकर कवि के यह शब्द ठीक जँचते हैं:—

> मन हाथ में उनका नहीं, वे इन्द्रियों के दास हैं,
> कल-कंठिया गुजराती उनके अतुल आवास हैं।
> वे नेत्र-बाणों से बिंधे हैं बाल-व्यालों से डसे,
> कैसे बचेंगे वे, विषय के बन्धनों से हैं कसे॥
> बस भांड भडुवे, मसखरे उनकी सभा के रत्न हैं।
> करते रिझाने को उन्हें अच्छे बुरे सब यत्न हैं॥
> धारा बचन की कौन जो उनके सुखार्थ न बह उठे?
> है कौन, उनकी बात पर जो "हां हजूर" न कह उठे?
> है अन्य धनियों की दशा भी ठीक ऐसी ही यहां,
> देखें दशा जो देश की अवकाश है उनको कहां?
> रक्खें मितव्यय तो बड़ों में व्यर्थ उनका नाम है।
> है इत्र मिल सकता जहां तक तेल का क्या काम है!

यह लीला देख सुनकर सिवाय घृणा के और कोई विचार चित में उत्पन्न नहीं होता है। खेद की बात है जिस राजपूताना में महाराणा प्रताप और दुर्गदास राठौर सरीखे इन्द्रियजित वीर हो गये हैं उसी वीर-भूमि राजस्थान में सैकड़ों इन्द्रिय लोलुप भरे पड़े हैं। हरे हरे! इन्हीं रखेलियों* को राजपूताना में पास-वान जी—पड़दायत जी कहते हैं। इन पासवानों (Cocubines) का बड़ा भारी सत्कार होता है।

---

* राजपूत जाति में व्याही हुई स्त्री से जो सन्तान हो वह असली (Legitimate) समझी जाती है और घर में डाली हुई औरत (पासवान) की औलाद को "खवासवाल" कहते हैं। देश और जाति की प्रथानुसार यह अनौरस (खवासवाल) पुत्र गद्दी के हकदार नहीं हो सकते हैं। मगर जो किसी स्त्री को लड़ाई में पकड़

विवाहिता स्त्रियां उनके पांव का धोवन भी नहीं समझी जाती हैं। जहां सुनिये वहां यही ज्ञात होता है कि अमुक सरदार के यहां दो पासवान हैं, अमुक के यहां चार हैं इत्यादि। ऐसे बहुत कम सरदार होंगे कि जिनके यहां यह बला न हो। भला जहां यह हाल है वहां कैसे उत्थान हो सकता है। किन्तु बलिहारी है राजपूताने के उस कानून की जिसकी बदौलत उनकी जागीरें बची हुई हैं नहीं तो ऋण के मारे सैकड़ों ठिकाने और रजवाड़े तबाह हो गये होते। अधिक क्या लिखा जाय। यह बात बहुत ही ठीक है कि छोटे छोटे राजपूत भाई उन बड़े बड़े क्षत्रिय भाइयों से कहीं अधिक अच्छे पद पर चलते हैं। मनु महाराज का कथन है—

'शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यन्त्याशु तत्कुलम्।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्धन्ते तद्धि सर्वदा॥

अर्थात् जिस वंश में स्त्रियां शोक करती हैं वह शीघ्र ही नाश को प्राप्त हो जाता है। और जहां वे प्रसन्न—सुखी रहती हैं वह वंश सदा बढ़ता रहता है। भला जब स्त्रियों का यहां तक अपमान किया जाता है तो क्या प्रसन्न रह सकती हैं? कदापि नहीं। किन्तु

लावें या जो कोई क्षत्राणी खुशी से अपने पति के यहां से घर में आजावे तो उसकी और व्याहता स्त्री की सन्तान में कुछ फर्क नहीं समझा जावेगा। विस्तृत हाल 'सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ स्वर्गीय मुन्शी देवीप्रसाद जी कृत' "परिहार प्रकाश" के पेज ६६ में देखो मू० ॥=)
—लेखक

स्त्री जाति को धन्य है कि वह इतना सहते हुए भी पति को सदा अपना सर्वस्व समझती है। यदि कहीं इसका उलटा हो तो पति साहबान तुरन्त आपे से बाहर हो जावें। अपना ऐसा ही सब का चित्त समझना चाहिये। जब स्त्रियां प्रसन्न नहीं रहेंगी तब क्या होगा, वह इस श्लोक से स्पष्ट है—

यदिहि स्त्रीन तो चतेपुमांसं न प्रमोदयेत्।
अप्रमोदात्पुनः पुसां प्रजनं न प्रवर्त्तते॥

यह स्पष्ट है कि जब स्त्री प्रसन्न नहीं रहेगी तो पुरुष भी प्रसन्न नहीं रहेगा। जब पुरुष प्रसन्न नहीं रहेगा तब सन्तति भी नहीं होगी। यदि होगी भी तो क्रूर। यही कारण है कि आज इस राजपूत जाति में दुर्गदास प्रभृति (वगैरह) जैसे वीर विरले ही दिखाई देते हैं। जब सन्तति अच्छी नहीं होगी तब क्या होगा, यह पाठक स्वयं जान सकते हैं।

जाति के विद्वान् नेताओं से नम्र प्रार्थना है कि जिस प्रकार उन्होंने वेश्या-बहिष्कार करके जाति का बड़ा उपकार किया है वैसे ही वे इस प्रथा को उठवाने के लिये यथासाध्य यत्न करें, नहीं तो यह क्षत्रिय जाति वैसे ही अधःपतन को प्राप्त हो रसातल को चली जायगी।

आज कल बहुधा जातीय सभा वाले एक नियम यह पास करते हैं कि इस सभा का धर्म अथवा राज-नीति से कोई सम्बन्ध नहीं है। सो क्यों? भला

ब्राह्मणों का धर्म कर्म्म से सम्बन्ध नहीं और क्षत्रियों का राजनीति से सम्बन्ध नहीं तो फिर उस से और किस का होगा? याद रहे कि राजनैतिक विषयों में बृटिश सरकार को सहायता देना राजपूतों का प्रधान कर्त्तव्य है और जब तक हम लोग राजनैतिक विषयों को हाथ में न लेंगे तब तक उसके योग्य कदापि न बन सकेंगे। कुछ लोगों का शायद यह ख्याल है कि राजनैतिक विषय में भाग लेने से गवर्नमेण्ट नाराज़ होगी यह उनकी भारी भूल है। कारण कुछ शस्त्र पकड़ कर हम लोग अंग्रेज़ सरकार के बखिलाफ़ तो होते ही नहीं किन्तु उसी की सहायता के लिये अपने मौरूसी धर्म की उन्नति करने का यत्न करते हैं। प्रत्यक्ष देखा जा रहा है कि महाराजा साहब जोधपुर, बीकानेर, जयपुर और अलवर आदि ने राजनैतिक विषयों में बृटिश सरकार को सहायता दी तो सरकार ने कृतज्ञता पूर्वक उसे स्वीकार कर उनका कितना मान बढ़ाया है। अतः सरकार तो उलटी हमारे काम में सहायता देने को तैयार है। राजनैतिक विषयों को हाथ में लेने के लिये इतिहास ही सब से प्रथम सामग्री है, उस के लिये प्रयत्न करना राजपूत मात्र का मुख्य कर्त्तव्य है। क्योंकि राष्ट्रीय जीवन इतिहास में ही छिपा है। जो जाति अपने पूर्वजों के विषय में यह नहीं जानती कि वे अपने जीवन में क्या २ कार्य्य करते थे और कौन थे? उसे उन्नति के सुमार्ग पर पांव रखने का अवसर कभी नहीं मिलता है। इतिहास ही

जातियों को उन्नति के मार्ग पर ले जाता है और बताता है कि जाति की उन्नति या अवनति किन २ कारणों से हुई। इतिहास ही भविष्य की बुराइयों से बचाता है और परोपकार, आत्मत्याग, स्वदेशप्रेम और जातिहित का कीर्तन करके हमारे मुर्दा दिलों में उत्साह–जोश फूंकता है और कार्य्यक्षेत्र में आगे बढ़ने को उत्तेजित करता है। इसलिये सभ्य और उन्नतिप्रिय देशों और क़ौमों में इतिहास-विद्या की बड़ी प्रतिष्ठा है। राजपूताने में भी एक पुरानी कहावत चली आती है कि "नाम गीतड़ों या भीतड़ों से ही रहता है" याने जिसका इतिहास या चरित्र एतिहासिक पुस्तकों में लिखा रहता है या जिनके बनाये महल मकानात मन्दिर आदि मौजूद हैं, उन्हीं की कीर्ति सदा रहती है। यह परम्परागत कहावत ठीक है पर बड़े २ महल अटारियें बनानेवालों का नाम उतने समय तक बना नहीं रहता जितना कि गीतड़ों याने तवारीख़ी पुस्तकों से बना रहता है। यदि महर्षि बाल्मीकि और वेदव्यास आदि महाराजा रामचन्द्र और राजर्षि कृष्ण का चरित्र–इतिहास नहीं लिखते तो आज हजारों वर्ष बीत जाने पर भी उनका नाम बना नहीं रहता। इस सिद्धान्त को पुष्ट करते हुए हिन्दुआ सूर्य्य मेवाड़पति महाराणा राजसिंह जगतसिंहोत ने भी जयसमन्द झील वाले अपने महल के एक थंभे पर स्वरचित छप्पय इस प्रकार खुदवाया था:—

कहां राम कहां लखण, नाम रहिया रामायण ।
कहां कृष्ण बलदेव, प्रगट भागौत पुरायण ॥
बालमीक शुक व्यास, कथा कविता न करंता ।
कुण सरूप सेवता, ध्यान मन कवण धरंता ॥
जग अमर नाम चाहो जिके, सुणो सजीवण अक्खरां ।
राजसी कहै जगराणरो, पूजो पांव कवीसरां ॥

सौ बातों की एक बात है कि जिनका इतिहास होता है उन्हींका अस्तित्व रहता है, और जिनका नहीं है वे डगमगा जाते हैं और अपनी योग्यता तथा कुल को भूल जाते हैं। अतः इतिहास की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये। वास्तव में देखा जाय तो हम अपने इतिहासप्रसिद्ध पूर्वजों का गर्व कर सकते हैं। हमको इसका भी कम अभिमान नहीं होना चाहिये कि हम सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी व अग्निवंशी और ऋषिवंशी सम्राटों की सन्तान हैं। साथ ही हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि हिन्दुओं के परम पूज्य अवतार महाराजा रामचन्द्र और योगिराज श्रीकृष्णचन्द्र, राजर्षि गौतम बुद्ध और भगवान् महावीर हमारे ही पूर्वज थे। हमारे पूर्वजों की कीर्ति से संसार का इतिहास भरा पड़ा है। जिस जाति का प्राचीन इतिहास ऐसा समुज्ज्वल है उसीको कुछ लोगोंने अपनी कुरुचि या भ्रान्तिवश निन्दनीय ठहराया है। इन लोगों में टाड, विन्सेन्ट, स्मिथ, रसल, प्रिन्सिपल बालकृष्ण एम० ए०, पी० एच० डी० (खत्री) और राव बहादुर बा० हीरालाल बी० ए०, एम० आर० ए० एस० (कलाल) आदि मुख्य हैं। इन्होंने अपनी लिखी सरकारी व ग़ैर सरकारी

एतिहासिक पुस्तकों में हमारी क्षत्रिय वर्णस्थ शुद्ध राजपूत जाति को यूनानी, पार्थियन, शक (ईरानी) तुर्क, गूजर, हूण* आदि अनार्य जातियों से उत्पन्न वर्णसंकर-मिश्रित होना बतलाया है ‡ । यह बिल्कुल

---

* मनुस्मृति के अध्याय १० (श्लोक ४३-४४) में लिखा है कि

शनकैस्तु क्रियालोपादिमाः क्षत्रिय जातयः ।
वृषलत्वं गता लोके ब्राह्मणादर्शनेन च ॥
पौण्ड्रकाश्चोडद्रविडाः काम्बोजः यवनाः शकाः ।
पारदाः पल्हवाश्चीनाः किराता दरदाः खशाः ॥

"पौंड्रक, चोड, द्रविड, कम्बोज, यवन, शक, पारद, पल्हव, चीन, किरात, दरद और खश ये सब क्षत्रिय जातियां थीं परन्तु शनैः शनैः क्रिया लोप होने से वृषल (विधर्मी-धर्म भ्रष्ट) हो गईं।" इसका तात्पर्य यह है कि वैदिक धर्म को छोड़कर दूसरे (बौद्ध, जैनी आदि) धर्मों के अनुयायी होजाने से वैदिक धर्म के आचार्यों ने उनकी गणना विधर्मियों(धर्मभ्रष्टों)में की ऐसा वृत्तान्त "विष्णुपुराण" के तीसरे अध्याय (अंश ४) और "वायुपुराण" (अध्याय ८८ श्लोक १२१-४३) में लिखा मिलता है उससे साफ़ ज्ञात होता है कि शक आदि ऊपर लिखी जातियां क्षत्रिय थीं और वे महाराजा सगर के समय भी मौजूद थीं । पीछे से बौद्ध आदि मत स्वीकार करने पर वैदिक धर्म वालों ने उनको म्लेच्छों में गिन लिया। भारत में जब बौद्ध मत ने जोर पकड़ा तब ब्राह्मण आदि अनेक लोग बौद्ध हो गये जिसको भी धर्मद्वेष के कारण ब्राह्मण देवताओं ने अपनी स्मृतियों में शूद्र लिख दिया है। यही नहीं किन्तु अङ्ग, बंग, कलिंग, सुराष्ट्र, मगध आदि बौद्ध प्रायः प्रान्तों में यात्रा के सिवाय जाने पर पुनः संस्कार करने का नियम तक कर दिया था। फिर बौद्ध धर्म की अवनति होने पर वे ही बौद्ध पीछे वैदिक धर्मावलम्बियों में मिलते गये। —लेखक

‡ इन कपोल कल्पनाओं से बढ़ चढ़कर एक बात शेखचिल्ली की मुर्गी के बच्चों वाली कहानी सी और सुनिये ! भारत के दक्षिण

ही सफ़ैद झूठ है। ऐसी दशा में अपनी आर्य्यवंशज

प्रान्त के ब्राह्मण पाधों का कहना है कि कलियुग में क्षत्रिय वर्ण ही नहीं है। और जो आज राजवंश हैं वे आर्य्य वंशज "क्षत्रिय" नहीं हैं। वे लोग पुराणों का प्रमाण यह देते हैं कि "शिशु नाग वंश के अन्तिम राजा महानन्दी के पीछे शूद्र प्रायः और अधर्मी राजा होंगे।" परन्तु यह ठीक नहीं। क्योंकि इस विषय में बड़े २ इतिहास-वेत्ताओं का प्राचीन शिलालेखों व ताम्रपत्रों आदि के आधार पर मत है कि सम्राट् चन्द्रगुप्त हिमालय के निकट के एक प्रदेश का—जो मोर पक्षियों की अधिकता के कारण "मौर्यराज" कहलाता था, उच्च कुल का क्षत्रिय था; जैसा कि बौद्ध ग्रन्थों में मिलता है। मौर्य वंश उच्च क्षत्रिय कुल है और वह नंद वंश से अधिक पुराना था। मौर्य राजा अशोक के समय बौद्ध धर्म का प्रचार बहुत बढ़ गया जिससे ब्राह्मणों का मत निर्बल होता जाता था। इससे द्वेष से लिख दिया गया कि ये राजा शूद्र और अधर्मी होंगे। पुराणों के इस कथन में उतनी ही सच्चाई है जितनी कि परशुराम के २१वार पृथ्वी को निःक्षत्रिय की कथा में है।

प्राचीन शिला लेखों व ताम्रपत्रों से स्पष्ट है कि दक्षिण में भी पहले भारतवर्ष के अन्य विभागों की तरह चार वर्ण थे। किन्तु विक्रमी संवत् की १५वीं शताब्दी के आस पास वहां के ब्राह्मणों ने पुराणों के उपरोक्त कथन पर विश्वास कर दक्षिण में केवल दो वर्ण "ब्राह्मण और शूद्र" पक्के कर दिये और ब्राह्मणों की धींगा-धींगी और मुख्यता के कारण उनका आदेश चल पड़ा। यदि वास्तव में देखा जाय तो मरहटों में क्षत्रिय जाति अब तक मौजूद है जैसा कि उनके उपनाम मोरे (मौर्य—मौरी), बाघ (बघेला-सोलंकी) गुप्त (गुप्तवंशी), पंवार (परमार) चालके (चालुक्य—सोलंकी) जादव आदि से पाया जाता है। इस प्रकार ब्राह्मणों ने वहां के क्षत्रियों को शूद्र मानकर उनकी धर्म क्रियाएं वैदिक रीति से नहीं किन्तु पौराणिक पद्धति से कराना शुरू कर दिया और वही रीति उनके यजमानों के अज्ञान के कारण चल पड़ी। यहां तक कि कमलाकर पंडित ने शूद्र कमलाकर (शूद्र धर्म तत्व) नामक ग्रन्थ लिख कर उनकी धर्म क्रियाओं की पौराणिक विधि भी स्थिर कर

राजपूत* जाति का प्रमाणिक इतिहास सुयोग्य और इतिहास-मर्मज्ञ पुरुषों द्वारा लिखे जाने की अत्यन्त

दी। जब दक्षिण के स्वजातीय क्षत्रिय (राजपूत) इस प्रकार शूद्रों की गणना में आने लगे तो राजपूताना आदि अन्य प्रदेशों के राजपूतों से उनका विवाह सम्बन्ध दूर देश आदि कारणों से छूट गया। और यही कारण था कि सितारे के राजा छत्रपति शाहू के कोई संतान न होने से उसने उदयपुर के महाराणा जगतसिंह (दूसरे) के छोटे भाई नाथजी को सितारे की गद्दी के लिये गोद (दत्तक) लेना चाहा था पर महाराणा ने उसे स्वीकार न किया। यद्यपि शिवाजी और उनके वंशज (सतारा-कोल्हापुर-नागपुर) मेवाड़ के गहलोत (सीसोदिया) राजवंश से निकले हुये हैं जैसा कि उदयपुर राज्य के "वीरविनोद" नामक वृहत् इतिहासमें हिन्दू धर्म रक्षक-स्वराज्य संस्थापक छत्रपति महाराजा शिवाजीका महाराणा अजयसिंह के कुंवर सज्जन सिंह के वंश में होना लिखा है (वीर विनोद खं० २ पृष्ठ १५८१-८२) इसी इतिहास में हिन्दुओं के एकमात्र स्वतंत्र 'नेपाल' साम्राज्य के राजाओं का मूल पुरुष मेवाड़ के रावल समरसिंह के पुत्र रत्नसिंह का छोटा भाई कुम्भकरण माना गया है। सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के चित्तौड़ ले लेने पर महाराणा रत्नसिंह के भाई बेटे इधर उधर चले गये और कुंभकर्ण के वंशज समय पाकर कमाऊं की पहाड़ियों में होते हुये पाल्पा में जा जमे। फिर धीमे २ अपना राज्य बढ़ाने लगे और पृथ्वी नारायणशाह ने नैपाल पर अधिकार जमा लिया।" यह अनमोल वृहत् इतिहास सुप्रसिद्ध साहित्य प्रेमी महाराणा सज्जनसिंह जी जी० सी० एस० आई० (वि० सं० १९३१—४०) ने कोई चार पांच लाख रुपये के खर्च से इतिहास की सामग्री व शिलालेख संग्रह करा एक बड़े विद्वान् महामहोपाध्याय कविराजा सांवलदास जी चारण के प्रधान सम्पादकत्व में अपटूडेट निर्माण कराया था। यह ग्रंथ कई वर्षों से दुष्प्राप्य है।—ले०

* इतिहासज्ञ राय बहादुर पं० गौरीशंकर ओझा का मत है कि जिस प्रकार राजपूताना नाम अंग्रेजों के समय में प्रसिद्ध हुआ है

आवश्यकता है। वर्षों से यह प्रस्ताव आल इंडिया क्षत्रिय उपकारिणी महासभा आगरा के सामने भी पेश है, पर खेद है कि अब तक सिवाय थोथे प्रस्ताव पास करने के इस विषय में कोई अमली काम नहीं हुआ है।

आजकल पंजाब भर के कुल स्कूलों में एक एतिहासिक पुस्तक पढ़ाई जाती है जो हाल ही में वहां के चौधरी अब्दुलमजीद खां एम० ए. और मिस्टर मदनमोहन एम० ए० प्रोफेसर गवर्नमेन्ट कालेज लाहौर ने बनाई है। इसमें इन दोनों लेखक महाशयों ने राजपूत जाति के विषय में प्रायः वे ही बातें कुछ कांट छांट कर दुहरा दी हैं जो युरोपियन लोगों ने अपने इतिहास में

वैसे ही "राजपूत" शब्द भी एक जाति या वर्ण विशेष के लिये मुसलमानों के इस देश में आने के पीछे चला है। चीनी यात्री हुएनत्संग ने वि० सं० ६८६ से ७०२ (सन् ई० ६२६—६४५) तक इस देश में भ्रमण कर जो पुस्तक यहां के विषय में लिखी उसमें कई राजाओं के नाम लिख कर उनको क्षत्रिय ही लिखा है राजपूत नहीं।

मुसलमानों के राजकाल में क्षत्रियों के राज्य क्रमशः अस्त होते गये और जो बचे उनको मुसलमानों की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। इस प्रकार वे स्वतंत्र राजा न रह कर सामंत से बन गये। ऐसी दशा में मुसलमानों के जमाने में राजवंशी होने के कारण उनके लिये "राजपूत" नाम का प्रयोग होने लगा। फिर धीरे२ यह शब्द जाति सूचक होकर मुग़लों के समय या उससे पूर्व सामान्य रूप से प्रचार में आने लगा।

पृथ्वीराजरासे में रजपूत (राजपूत) शब्द पाया जाता है परन्तु यह ग्रंथ १६वीं शताब्दी से पहले का बना हुआ नहीं है।—ले०

लिखी है। विशेषता केवल यही है कि इन्होंने राजपूतों का क्षत्रिय वर्ण से सम्बन्ध होना मंजूर किया है और वह इस प्रकार है—"राजपूतों के कुछ राज्य थे परन्तु बाहर से जो जाति तुर्क, पारथियन, सिदियन, यूनानी, आईं वे भी राजपूतों में शामिल हो गईं और उनमें मिल गईं॥"

ये विद्वान् लोग जिनको विजातीय बतलाते हैं वे विदेश में रहने वाले क्षत्रिय जातीय पुरुष ही थे। क्योंकि किसी समय समस्त भूमंडल पर एक वैदिक-धर्म था और देश देशान्तर में क्षत्रियों का राज्य था और दूर २ तक के देशों में वे जाते आते रहते थे और विदेशों के क्षत्रियों से भी विवाह सम्बन्ध करते थे। रावबहादुर पं० गौरीशंकरजी ओझा ने अपनी एक एतिहासिक पुस्तक में लिखा है कि शक या सिदियन आर्य्य जाति से थे। इससे मालूम होता है कि वे भी अन्य देश के क्षत्रिय थे। जैसा कि हम पहिले अपने नोट में लिख आये हैं।

आगे इस पुस्तक में अग्नि वंश का वर्णन करते हुए लिखा है कि—"जिस वक्त बुद्ध मत फैल गया तो एक बड़े हवन को गंगा के पानी से शुद्ध किया गया और परशुराम ने तमाम क्षत्रियों को नाश कर दिया था इसलिये ब्राह्मणों को ज़रूरत हुई कि फिर म्लेच्छों का नाश करके धर्म को क़ायम रक्खा जाय।"

इस कोटेशन (अवतरण) के पढ़ने से इन इतिहास लेखकों की तवारीखी नावाकफ़ियत का पूरा पता लग जाता है। वही योरोपीय इतिहासकारों का सा अनुकरण किया गया है।

जिस वक्त बुद्ध मत फैल गया तो "एक बड़े हवन को गंगा के पानी से शुद्ध किया।" यह क्या बात हुई? इस वाक्य से इतिहासवेत्ताओं का क्या मतलब है कुछ समझ में नहीं आया। अग्निवंशी क्षत्रियों की उत्पति का समय भी जो बुद्ध काल के आस पास बतलाया जाता है वह भी ठीक नहीं है। क्योंकि चौहान और सोलंकी खाँपों का इतिहास बौद्ध काल से सैकड़ों वर्ष पहिले का मिलता है। इनकी भी उत्पति सूर्य्य वंशी और चंद्रवंशी राजा महाराजाओं से ही हुई है। परशुरामने क्षत्रियों का सर्वनाश कर दिया यह बात सर्वथा झूंठ है। यदि ऐसा होता तो महाराजा दशरथ और जनक आदि क्षत्रिय राजा कहां से आये? सीता जी के स्वयंवर में इतने क्षत्रिय राजा कहां से एकत्रित हुए? महाराजा रामचंद्र आदि चारों भाइयों का और उनके वंशजों का भी पता बहुत दूर तक एतिहासिक ग्रन्थों से लगता है।

कहां तक लिखें राजपूतों के सम्बन्ध में जो असत्य और अयोग्य अपमानकारी बातें विजातीय इतिहास लेखकों ने लिखी हैं कम से कम उन्हें तो उन पुस्तकों में से निकलवा देने के लिये जातीय पत्रों और महासभा को अवश्य ही जहां तक हो शीघ्र कोशिश करनी चाहिये

ताकि वे निकाल दी जावें और रोग असाध्य न हो। मिस्टर रसेल और राय बहादुर बाबू हीरालालजी बी० ए० डिपुटीकमिश्नर ने किताबों में नारमदेव ब्राह्मणों की उत्पति धीमर की कन्या से बतलाई थी। उन्होंने अपनी सभा द्वारा आन्दोलन किया फल यह हुआ कि बराड़ और मध्यप्रान्त की सरकार ने ये अनुचित शब्द उस पुस्तक में से निकलवा दिया क्योंकि पुस्तक मध्यप्रान्त की सरकार के हुक्म से छपी थी। पुस्तक का नाम "ट्राइब्स ऐंड कास्टस् आफ़ दी सेन्ट्रल प्राविंसेज" है। इसी तरह कर्नल टाड साहब ने अपने "राजस्थान" इतिहास के दूसरे भाग के ७ वें अध्याय में पुष्करणा ब्राह्मणों के विषय में यह लिख दिया कि "वे बेलदार (ओड-वडर) थे और पुष्कर या पोकर की पवित्र झील खोदी जिस कार्य्य के लिये देवता की कृपा से पोकरण की उपाधि के साथ ब्राह्मणों का पद पाया और इनके पूजने की मुख्य वस्तु खुदाला है जो कि खोदने का एक औजार है इत्यादि।" इस पर पुष्करणों में सनसनी चली और उनकी जाति के सुप्रसिद्ध अग्रनेता वयोवृद्ध पण्डित मीठालालजी व्यास ने सं० १९६६ वि० में "पुष्करणे ब्राह्मणों की प्राचीनता" नामक पुस्तक अनेक प्राचीन इतिहासों तथा शास्त्र प्रमाणों सहित प्रकट कर टाड साहब की भूल और जनता का भ्रम मिटाने का प्रयत्न किया और अब वे इस उद्योग में हैं कि टाड राजस्थान ग्रंथ में से उनके विषय की कल्पित बातें निकालदी जावें।

स्वार्थी और धूर्त लोग जिनका काम जातियों को आपस में निन्दा करके लड़ाना होता है वे न केवल इस प्रकार बड़े लेखकों को भ्रम में डाल कर राजपूत और ब्राह्मण सी उच्च पवित्र जाति पर बुराई का धब्बा लगाने की चेष्टा करते हैं परन्तु और २ आदरणीय जातियों पर भी मिथ्या दोष आरोपित करते हैं। उदाहरण के लिये भारत की एक विद्या सम्पन्न "कायस्थ" जाति को और दूसरे इतिहास लेखकों का हवाला देते हुये "Researches into Hindu castes and creeds" जाति अन्वेषण प्रथम भाग सं० १९७१ वि० के पृष्ठ २७६ में लिखा है कि "कायस्थों को शूद्रों से भी नीच मानते हैं। कुनबी भी इनके साथ भोजन करते नहीं सुने गये हैं।" इनको विद्वानों ने संकरवर्ण में लिखा है। और यह कि "The clean Sudra castes such as the Kayasths" अर्थात् साफ़ (शुद्ध) शूद्र जातियें जैसे कायस्थ आदि। "The majority of Kayasthas clan do not wear sacred thread and admit their status as Sudras." इत्यादि। दूसरी अति प्रसिद्ध वैश्य जाति जो "ओसवाल" है उसके बारे में भी "जाति अन्वेषण" नामक ग्रन्थ के पृष्ठ १३३–१३४–१३५ पर यह लिखा मिलता है कि "ओसवाल एक धार्मिक संस्था का नाम है। जिस सम्प्रदाय के जैन आचार्य्य महात्मा श्री रत्नप्रभु सूरिजी महाराजने सब तरह की जातियों याने ब्राह्मण से चंडाल पर्यन्त को अपने धर्म में कर लिये थे कि जो शूद्र जातियें ओसवाल हो गईं थीं उनके कुल का कुल नाम दास कहाया। जो पापिष्ट–

क्रूरकर्मी ओसवाल हुये थे उनके कुल का नाम दोषी रखा गया और जो बलाई, बांभी, माहेश्वरी, चंडाल व तेली आदि जातियें जो ओसिया नगरी (जोधपुर-राज्य में) में ओसवाल हुई थीं उनका जाति स्मरणार्थ उनकी जाति ही के नामों से वही गोत्र संज्ञा हुई इत्यादि।" इस प्रकार राजपूत, ब्राह्मण, कायस्थ और ओसवाल वैश्यों की भी निन्दा मूर्ख लोगों ने द्वेषवश कर डाली। परन्तु "कहा कृष्णको घट गयो भृगु जो मारी लात"—इस अनर्थक प्रलाप से क्या इन प्रतिष्ठित क़ौमों का गौरव घट गया ? कदापि नहीं। हमारी राजपूत जाति अब भी चेत और ऐसी ग़लत फ़ैमियों को इतिहास की रोशनी डाल कर दूर करें। बड़े बड़े इतिहासज्ञ भी प्रतिष्ठित जातियों की नीच उत्पत्ति बतलाने में नहीं चूके हैं। धन्य है उनकी बुद्धि चाहे झूठ हो या सच। यथा महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री एम० ए० सी० आई० ई० वाइस प्रेसिडेन्ट बंगाल एसियाटिक सोसाइटी ने Preliminary Report on the Operation in search of Mss. of Bardic Chronicles. नाम की अपनी पुस्तक में जो कलकत्ते में सन् १९१३ ई० में छपी चारण जाति और भाट जाति के विषय में लिखा है कि—"कवि ब्रजलालके बनाये हुए 'कुलकुल मण्डन'में वर्णन है कि चारण लोग वर्णसंकर जाति है। उनका जाति सूचक शब्द "चार" यह बतलाता है कि चारण जाति का आदि पुरुषा जगत था और जगत की मा के चार पति थे।" इसके सिवाय

चारणों के गोत्र ब्राह्मणों और राजपूतों दोनों के पाये जाते हैं *। ढोली भी अपने को चारणों का भाई बन्धु बतलाते हैं। चारणों के बारे में एक व्यंग उक्ति यह है कि:—

कुला चुला बापरो भुले प्रजापति कि पोर।
दिना गधा चरावतो रातो करतो रोड़॥

अर्थात् चारण कुंभार (प्रजापति) का द्वार भूल गया है जिससे कि पहिले वो भिक्षा मांगता था। दिन में अब वो गधे चराता है और रात्रि में हंसी मजाक करता है अर्थात् विदूषक बनता है।

और भी चारणों के बारे में किसी की कृपा-कटाक्ष इस प्रकार हुई है:—

आटारो खो इलिया छानारो खो चुल।
कलस बिगारण कांगलो कवित्त बिगारण कुल॥

अर्थात् ईलियां आटे की शत्रु है, चुल्हा छाणों (ईंधन) का बैरी होता है, कव्वा पानी के घड़े को बिगाड़ता है और चारण कविता को बिगाड़नेवाला है।

बड़े शोक की बात है कि जिस चारण जाति ने राजस्थान के काव्य शास्त्रकी आज तक रक्षा की है उसी को इस प्रकार के मिथ्या दोष लगाना कृतघ्नता

* चारण जाति की उत्पत्ति के विषय में हमारा नोट "राजपूत जाति को सन्देश" पुस्तक के पृष्ठ ३८ में देखिये तथा भविष्य में प्रकाशित होने वाली पुस्तक "राजपूतों का उत्थान और पतन" (Rise & Fall of Rajputs) में हम इस जाति का सविस्तृत वृत्तान्त देंगे। —लेखक

नहीं तो क्या है ? कहां तक कहें। धन्य हैं वे महापुरुष इस प्रकार जाति निन्दा के उद्गार प्रकट करके व्यर्थ ही हँसी के पात्र बनने की चेष्टा करते हैं।

मध्यप्रान्त की "ट्राईब्स एन्ड कास्टस्" Tribes and Castes of C. P. पुस्तक की चौथी जिल्द के ४१७ वें पेज पर मर्य्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र के मुख्य वंशज हिन्दुआसूर्य्य उदयपुर मेवाड़पति के राजवंश के विषय में लिखा है कि "वे (गहलोत खांप के ❀ क्षत्रिय)

❀ गहलोत कुल २४ शाखाओं में विभक्त हैं जिसकी नामावली इतिहासज्ञ टाड साहब के गुरु ज्ञानचन्द जैनयति के मांडल (मेवाड़ में) के उपासरे के पुस्तक संग्रह में के एक पन्ना में से पं० गौरीशंकरजी ओझा ने टाड राजस्थान की टिप्पणियों में इस प्रकार प्रकटकी है—(१) गुहिलोत (२) अहाड़ा (३) सीसोदिया (४) कुचेरा (५) मांगलिया (६) अजबरिया (७) कैलवा (८) मगरोपा (९) कूड़ेचा (१०) धोरणा (११) भीमला (१२) हूल (१३) गोधा (१४) सेहाड़िया (१५) कोठकरा (१६) आसेचा (१७) नादोड्या (१८) ओडलिया (१९) पालरा (२०) हुवासा (२१) पीपाड़ा (२२) भटेवरा (२३) मुंधरायता और (२४) वूसा। उदयपुर राजवंश के इसी गहलोत कुल में वर्त्तमान नैपाल राजवंश है जो आज आदर्श हिन्दू साम्राज्य हो रहा है। यह नैपाल साम्राज्य ऐसा पर्वतों से घिरा हुआ विचित्र देश है जो प्राकृतिक रूप से आज तक स्वतन्त्र बना हुआ है। संसार में केवल इसी नैपाल देश में १०४९ वर्षों से प्राचीन हिन्दू प्रणाली पर शासन हो रहा है। और इसी एक देश पर आज तक किसी भारतीय या विदेशी आक्रमणकारी को सफलता नहीं मिली है। वर्तमान महाराजा गत २६ वर्षों से शासन कार्य करते हैं और अवस्था कोई ६५ वर्ष के है। इस वृद्धावस्था में भी अपने साम्राज्य का संचालन बड़ी योग्यता से कर रहे हैं। हिन्दू शास्त्रों में कहा गया है कि "न्याय आसन पर बैठे हुये राजा को विश्राम नहीं

बहुत करके गुजरात के नागर ब्राह्मणों से उत्पन्न हुये हैं और ४४१ पेज में लिख मारा है कि चँदेल, गहर-वार और राठोड़ राजवंश मिस्टर विन्सेन्ट स्मिथ के मतानुसार गोंड, भड़, आदि जंगली-अछूत

करना चाहिये।" महाराजाधिराज शास्त्र के इस वचन का पूर्ण पालन करते हैं। प्रति दिन कई घंटे खड़े रह कर अपील और प्रार्थना पत्र आदि सुनते हैं। उस समय चपरासी-पहरुए किसी को नहीं रोकते हैं। वहां न्याय इतना अधिक महंगा नहीं है जितना अन्य राज्यों में देखने में आता है। न तो वहां कोई रस्म अदा करने में ख़र्च की जरूरत है और न अहलकारों के हक़ हैं। होता क्या है वादी और प्रतिवादी दोनों न्याय अधिकारी के सामने अपनी २ बातें कहते हैं और न्यायी इन्साफ दे देता है। यदि हाकिम हुक्कामों की ओर से किसी मामले में पक्षपात देख पड़े तो वही जुर्म उन पर लगता है। इतना सस्ता न्याय शायद ही कहीं देखने में आता हो। राज्य भर में महाराजा के न्याय का इतना आतंक है कि अपराध करते समय कार्तवीर्य की तरह महाराज की छाया अपराधी के सामने खड़ी रहती है। महाराजा के आदर्श न्याय, प्रजाहित और सदाशयता का यह एक बड़ा भारी प्रमाण है। स्वतंत्र राज्य की प्रजा होने के लक्षण उनकी आकृति से ही मालूम होते हैं। बेगार का नाम तक नहीं है और यदि ली भी जाती है तो प्रजा हित के लिये जैसे नहर आदि खुदवाना जिन से प्रजा की खेती को लाभ हो। राज्य में मादक द्रव्य और नमक का व्यापार नहीं किया जाता। शिक्षा विभाग बड़ा अच्छा काम कर रहा है। स्वयं महाराजाधिराज के एक ही महारानी है। प्रजा तो महाराज को भीष्म कहती है। महाराज कुमारों का भी एक ही—एक विवाह हुआ है। राज्य के प्रधान जागीदारों में भी एक-ही—एक विवाह करने का भाव उत्तेजित किया जा रहा है। व्यभि-चार का कानून बड़ा सख़्त है। दास प्रथा कानून से उठा दी है। यद्यपि अहिन्दू को प्रचार करने की आज्ञा नहीं है तब भी राजधानी काठमांडू के पास मसजिद बनवाने की आज्ञा भी अभी देदी गई है।

जातियों से निकले हैं जिन्होंने हिन्दू धर्म स्वीकार कर हिन्दू समाज में प्रवेश किया और अपनी उत्पति सूर्य्य और चंद्र से जा मिलाई। इसी प्रकार और भी कई राजपूत राजवंशों को अनार्य जातियों से मिश्रित Mixed बतलाया है। अतएव हमारे जातीय पत्रों के सम्पादकों और महासभा को चाहिये कि वे इन पुस्तकों के ऐसे लेखों का सप्रमाण और संतोष जनक खंडन करें ताकि उच्च राजपूत वंश कलंक से बचें। साथ ही जातीय इतिहासज्ञों को चाहिये कि वे राजपूत राजकुलों का मय शाखा प्रशाखा के संक्षेप वृत्तान्त छाप दें तो जाति का बड़ा उपकार होगा क्योंकि टाड साहब का २०) रु० का राजस्थान इतिहास हरएक राजपूत नहीं खरीद सकता। इस के अलावा कई राजा शुद्ध राजपूत नहीं होने पर भी अपने को राजपूत कहते हैं। इसलिये स्वजाति के सब राजा महाराजाओं की एक नामावली बना देना भी ज़रूरी है ताकि उच्च वंश के क्षत्रिय राजा धोके में आकर अक्षत्रियों से सम्बन्ध न करें। और इस तरह कलंक और अप्रतिष्ठा से बच जावें।

कई राजवंशों के नाम ऐसे हैं कि लोग उन्हें भ्रम से राजपूत ही नहीं समझते हैं। जैसे महियर (मालवामें) के राजा "जोगी कछवाहा" हैं परन्तु बहुत से राजपूत भूल से उन्हें निरे "जोगी" ही समझते हैं। इसी तरह से "विपत्ति काले मर्यादा नास्ति" के अनुसार भील के घर पानी पी लेने से भोमट (मेवाड़) प्रदेश के शुद्ध

राजपूत* सरदारोंके साथ कई स्वजातीय सरदार जैसा होना चाहिये वैसा बन्धुभाव नहीं रखते । चाहे वे या उनके आत्मीयजन होटलों में विधर्मी खानसामों के हाथ का भोजन तक बड़े आनन्द से खाते फिरते हों। यह भोमट तथा अन्य शुद्ध राजपूतों के साथ बड़ा भारी अन्याय है ।

ऐसी दशा में प्रत्येक राजवंश की खांप-कुल और शाखा प्रशाखाओं को जानने की बड़ी आवश्यकता है । इसी लिये बराड़ व मध्यप्रदेश क्षत्रिय प्रान्तिक सभा के प्रधान श्रीमान् बैरिस्टर मिस्टर गहरवार, जज इंदौर स्टेट सन् १६२२ ई० के "राजपूत पत्र" में लिखते हैं कि एक पढ़े लिखे चौहान कुटुम्ब ने अपने लड़के का विवाह हाडा कुलकी लड़की से कर दिया । यद्यपि हाडा भी चौहानों की शाखा † में से हैं। यदि उन्हें यह मालूम होता कि वे दोनों एक ही कुल(खांप)के हैं तो ऐसा कभी न करते । हमारे विचार में जहां तक हो हरेक वंश की शाखाओं प्रशाखाओं

* भोमट राजपूतों का विशेष वृत्तांत हमारी बनाई पुस्तक "राजपूत जाति को सन्देश" के पृष्ठ ६० में देखो । —लेखक।

† राजवंशों की इस प्रकार की अनेक शाखाओं की उत्पत्ति या तो किसी प्रसिद्ध पुरुष के नाम से (जैसा कि सूर्य्यवंशी "गुहिल" से गुहिलोत-गहलोत, चन्दा से चंद्रावत आदि) या उनके निवास स्थान से (जैसा कि सीसोदा गांव से सीसोदिया, आहड़ से अहाड़िया आदि) हुई है । इस प्रकार की शाखा प्राचीन काल में प्रसिद्ध नहीं थी । उस समय तो मुख्य खांप clan ही को महत्व दिया जाता था । जो बड़ा ही सराहनीय था । —लेखक ।

और उपशाखाओं का विस्तार रोक कर अगली प्रचलित उपशाखाओं को उसकी मुख्य शाखा के अन्तर्गत ही कर देना चाहिये। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति के लिये इस लंबे चौड़े हिसाब को याद रखना असंभव सा ही हो जाता है। कुछ समय के बाद लोग इन गौण उपशाखाओं को ही भ्रम वश मुख्य शाखा मान कर असली जड़ को भूल जाते हैं और एक वंश की दो शाखाएं आपस में ही विवाह सम्बन्ध करने लगते हैं जैसा कि ऊपर हवाला दिया जा चुका है। अतः इस गड़बड़ को दूर करने के लिये जहां तक हो उपशाखाओं का प्रचार रोक कर मुख्य खांप के प्रचार में यत्न किया जाय। यू० पी० आदि अनेक प्रान्तों के राजपूतों के साथ राजपूताने के राजपूतों का इकहरा सम्बन्ध होता है, अर्थात् उनकी कन्या विवाह कर ले आते हैं परंतु अपनी लड़की उन्हें बहुत ही कम देते हैं। यही बर्ताव स्वयं राजपूताने की भी अनेक खांपों के साथ किया जाता है। भला जब वे बराबरी के शुद्ध क्षत्रिय समझे जाते हैं तब इस प्रकार का अनुचित व्यवहार उचित हो सकता है? अतः जहां तक हो इन प्रथाओं को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये।

यहां पर हमें यह लिखते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि जोधपुर राज्य के अजायबघर और सुमेर पबलिक लाइब्रेरीके सुपरिण्टेण्डेण्ट श्रीयुत साहित्याचार्य प्रोफेसर पं० विशेश्वरनाथ रेऊ एम० आर० ए० एस० (लंडन) ने प्रमाणिक इतिहास की इस कमी को पूरी करने के लिये

बहुत कुछ उद्योग किया है। उसीके फल स्वरूप "भारत के प्राचीन राजवंश" नामक इतिहास के दो भाग अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। उन में महाभारत से लेकर आज तक के अनेक राजवंशों का प्रमाणिक इतिहास दिया गया है *। और इसके तीसरे भागमें राष्ट्रकूटों और गाहड़वालों (गहरवार) का इतिहास लिखा गया है जो छप रहा है। इस इतिहासकी पाण्डुलिपिके देखने का हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ है और हमें आशा है कि इसके प्रकाशित होते ही एक और भी इस विषय की कमी दूर हो जायगी।

इसलिये सब से प्रथम अपने ऐतिहासिक ज्ञान को बढ़ा कर एकता पूर्वक जाति उन्नति में भाग लेना और कर्त्तव्य को पालन करना राजपूत मात्र का परम धर्म है। ऐतिहासिक ज्ञान वृद्धि के साथ ही हमें अपने पूर्वजों के सद्गुणों का आदर्श सामने रखना चाहिये। जिस प्रकार उनमें सत्यता, वीरता, उदारता, सच्चरित्रता, सुशिक्षा, सार्वदेशिक प्रेम आदि अनेक गुण विद्यमान थे उसी प्रकार उन्हीं सद्भावों को भरकर हमें भी कर्त्तव्य पथ पर पैर रखना चाहिये और राजपूत जाति की

* प्रोफेसर रेऊजी कृत "भारत के प्राचीन राजवंश" भारत के साहित्य में अनमोल ग्रंथ रत्न हैं। प्रत्येक इतिहासप्रेमी क्षत्रिय को यह पढ़ने चाहियें। इसके तीसरे भाग का मूल्य भी करीब ३।।) रु० होगा। यह सब पुस्तकें "मैनेजर गहलोत प्रकाशक मंदिर (पबलिशिंग हाउस) घंटाघर जोधपुर" से मिल सकती हैं। —लेखक।

समुज्ज्वल कीर्ति का विस्तार करना और प्रान्तिक भेदभावों को मिटा कर विस्तीर्ण विचारों से काम लेना एवं समानता और भ्रातृत्व का तत्त्व बढ़ाना चाहिये। हमारे पूर्वज महाबली क्षत्रियों की भांति हमें शारीरिक व मानसिक बल की वृद्धि करनी चाहिये और इस निमित्त ब्रह्मचर्य्यपूर्वक जीवन और व्यायाम-कसरत आदि साधन सम्पादन और संगठित करना ज़रूरी है। राजपूताना की राजपूत जाति में बहुत से घराने ऐसे भी हैं जो हल से हाथ लगाना तक पाप समझते हैं परंतु उनको विचार करना चाहिये कि जब महाराजा जनक जैसे प्रतापी राजा को भी समय पर हल चलाने* में किसी प्रकार की हिचकिचाहट न हुई तब उनका हल से नफरत करना कहां तक उचित हो सकता है। इसी प्रकार साधारण राजपूत भी अपनी स्त्रियों को घर पर अपने खाने के लिये अनाज आदि पीसने में

* "अथ मे कृषतः लाङ्गला दुत्थिता ततः। क्षेत्रं शोधयता लब्धा नम्ना सीतेति विश्रुता"॥ रामायण १-६६-१४ बालकाण्ड॥

रामायण में जनक महाराज स्वयं कहते हैं कि हल चलाते हुये मुझे यह सीता मिली। इस कथा का भाव जो कुछ भी हो, परन्तु राजा के हल चलाकर खेत करने का पता इससे अवश्य लगता है। यदि उस समय खेती-बाड़ी करना राजा को मना होता तो ऐसा इतिहास में कभी नहीं लिखा जाता। अत "सीता" यह नाम और सीता-जनक-चरित्र पूर्णतया दृढ़ करता है कि खेत को जोतना और उसके सहारे कुटुम्ब को पालना अर्थात् किसान होना बुरा नहीं माना जाता था। वास्तव में किसान ही देश के प्राण हैं।

भी अपमान समझते हैं। परन्तु यह उनका ख़याल कहां तक ठीक है। ऐसे ही विचारों से स्त्रियों की तन्दुरुस्ती खराब हो रही है और वे पुराने वीरों के समान सन्तान उत्पन्न करने में असमर्थ हैं। आज हम लोग अपनी स्थिति से अधिक अपनी हैसियत दिखलाने की चेष्टा करते हैं। यह रोग अपनी जाति में दिन ब दिन बढ़ रहा है। इसी आडम्बर से ही अधिक ख़र्च दिखलावटी बातों में करते रहते हैं और बहुधा बौहरों के कर्जदार हो जाते हैं। वास्तव में मनुष्य को बनावटी बातों से लाभ कुछ नहीं। जब असलियत दूसरों को मालूम हो जाती है तो वे हिक़ारत की नज़र से देखते हैं। सादा जीवन में सदा सुख रहता है। प्राचीन समय में रोम देश ने बड़ी उन्नति की थी। किसी समय वह सभी बातों में बढ़ा चढ़ा था। उस समय की उसकी बातें आदर्श योग्य हैं। रोम के इतिहास से पता चलता है कि अपनी उन्नति के आदि काल में रोमनिवासी बड़ा सादा जीवन रखते थे। रोम के बड़े से बड़े आदमी खेती करते और अपने हाथ से हल चलाते थे। रोम में सैनिक तथा राजनैतिक नेता प्रायः किसान हुआ करते थे। रोम के इन किसान नेताओं में विशेषता यह थी कि ये लोग सर्वथा स्वार्थ त्याग करके केवल देश व जाति के हित के विचारों से काम करते थे। उनमें असाधारण योग्यता होती थी जिससे वे प्रजा द्वारा बड़े ओहदों पर चुने जाते थे। कभी २ तो वे कुछ समय तक बिना वेतन

लिये भी किसी २ पद का काम करते थे और आवश्यक कार्य हो जाने पर फिर अपने खेती के काम पर लौट आते थे।

एकवार जब रोम पर शत्रुओं की बड़ी चढ़ाई हुई और समस्त रूमी लोगों को भय हुआ कि उनकी स्वतंत्रता छिन जावेगी तो उनकी नज़र एक मनुष्य श्री० कोरोलएनस (Corolanns) पर पड़ी जिसको कि उन्होंने डिक्टेटर (Dictator) के सर्वोच्च पद पर नियुक्त करने का निश्चय किया। यह कोरोलएनस एक किसान था। जब लोग उससे यह प्रार्थना करने गये कि वह उस पद को स्वीकार कर ले तो वह उस समय हल जोत रहा था। इन लोगों के निमंत्रण पर वह अपना चोगा पहनकर उनके साथ हो लिया और ऐसी चतुराई से युद्ध का प्रबंध किया कि एक रात में ही उसने शत्रुओं को घेर कर उन्हें पराजय मानने को विवश कर दिया। इस प्रकार स्वदेश को बचा वह फिर अपने कृषि कार्य्य पर स्वयं वापस आकर पहले की तरह सादा जीवन बिताने लगा।

मरहटों का भी उनके उदयकाल के शुरू में ऐसा ही सादा जीवन था। एक इतिहासकार ने लिखा है कि "बाजरे की रोटी का कांदा (प्याज) से खाना— उनका भोजन था। ज़मीन, बिछोना और आसमान ओढ़ना था। तीस २ मील तक तो घोड़े की नंगी पीठ

पर हवाखोरी को ही निकल जाते थे। ये जब ऐसे परिश्रमी, कष्ट सहने वाले और पराक्रमी होते थे तब ही तो बड़े २ राज्यों के मालिक हुए। मुग़ल राज्य के संस्थापक बाबर और अकबर भी ऐसे ही ज़फ़ाकश और सादगी पसन्द थे। जिन लोगों में उद्योगशीलता को कष्ट सहने के गुण होते हैं उनमें विलासिता नहीं आती, वे बराबर उन्नति करते रहते हैं। जहां उनमें सुख-प्रियता और विलासता आई कि उनका अधःपतन आरम्भ हुआ। बड़े २ राजाओं और बादशाहों के राज्य उनकी सन्तानों के विषय-विलासी होनेपर ही नष्ट हो गये।

अन्त में हम भारत सरकार के सर्वस्वरूप राजनीतिज्ञों के दिये हुये कुछ चुने व्याख्यानों के सार देते हैं। आशा है कि इनसे हमारे पिछड़े हुये राजपूत रईस बहुत कुछ जानकारी और लाभ उठावेंगे:—

हिज् रायल हाईनेस दी ड्यूक आफ़ कनाट (सम्राट् के चाचा) ने प्रिन्सेज़ चैम्बर (नरेन्द्र मंडल) खोलते समय अपने व्याख्यान (स्पीच) में ८ फ़रवरी सन् १९२० को दिल्ली में यह कहा:—

"सम्राट् (शाहनशाह) की यह इच्छा है कि हर एक सन्देह या ग़लत ख्याल को दूर किया जाना चाहिये और वह आप सब नरेशों से विश्वास रखता है कि आप लोग अपनी मातृभूमि की राजनैतिक उन्नति में अधिकतर भाग लेवें।"

"Whose (Emperor's) desire it is that every breath of suspicion or misunderstanding should be dissipated and who now invites your Highnesses in the fulness of His confidence to take a larger share in the political development of your motherland." 8-2-1920.

—H. R. H. the Duke of Connought.

हिज एक्सीलेन्सी लार्ड चैम्सफ़ोर्ड वाइसराय आफ़ इण्डिया ने जोधपुर में २० नवम्बर सन् १९२० ई० के राज दरबार में भाषण देते यह कहा:—

"बुद्धिमान नरेश को चाहिये कि समय के परिवर्त्तन की लहर के साथ २ उसके अनुकूल अपना राज्य प्रबन्ध बनावे। उसे कोशिश करनी चाहिये कि अपने बाप दादाओं के रस्मों का लिहाज़ रखते हुए अपना शासन पहिले की अपेक्षा ज्यादा पबलिक की राह पर निर्भर रक्खे और अपने तई यह निश्चय करे कि थोड़े से मनुष्यों के आराम और हुकूमत के लिये बहुतों की भलाई नष्ट नहीं की जावे। मगर हालांकि नाबालिग़ी के वक्त में यह मुमकिन नही है कि राज्य प्रबन्ध मे बड़ा हेर फेर किया जावे फिर भी बहुत कुछ किया जा सकता है कि जिससे राजा और प्रजा के आपस मे अच्छे विचार और सहानुभूति बढ़े और पबलिक को जहां तक हो सके कार्य्यों मे शामिल रक्खे तथा उनकी शिकायतो को जाहिर करने के मुकम्मिल जरिये मुहैया किये जावें और उन शिकायतो को सही साबित होने पर रफा दफा किया जावे। कभी २ यह देखा जाता है कि राजधानी और उसके चारो ओर आबादी पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है और किसान लोगों के फायदे और भलाई की तरफ बहुत कम खयाल होता है। * * * रेवेन्यु का बन्दोबस्त करने का निश्चय बहुत बुद्धिमानी का है और मेरा विश्वास है कि इससे देहात के लोगो की उनकी जरूरतो और हौसलों को राज प्रबन्ध के साथ घनिष्ठ तौर पर मिला दिया जायगा।

"A Ruling Prince, if he is wise, will seek to harmonise his administration with the changing spirit of the times. He will endeavour while paying due regards to the customs of his forefathers to make his rule more responsible to public opinion than here-to-fore and to satisfy himself that the welfare of the many is not being sacrificed to the privileges and pleasure of the few. But while it is not possible during a minority to make great changes in the form of administration, much can be done to create an atmosphere of sympathy and mutual good feeling by taking the public into confidence so far as possible and by providing adequate means for the ventilation of grievances and for their speedy redress when found to be just * * * * * * Sometimes there is a tendency to concentrate too much attention in the capital and its surroundings and to pay too little heed to the welfare and interest of the cultivating population * * This is a wise resolve which will I trust bring the administration into close touch with the rural population, their needs and aspirations.

20-11-1920. —H. E. Lord Chelmsford.

हिज़ एक्सेलेन्सी लार्ड चैम्सफोर्ड वाइसराय ने बीकानेर में २६ नवम्बर सन् १६२० ई० के दरबार में भाषण देते इस प्रकार कहा:—

"भारत के नरेशों को शासन-कार्य का व्यवहारिक अनुभव प्राप्त करने के अवसर मिलते हैं इसलिये उनका कर्त्तव्य है कि स्वराज्य के मार्ग में वे अपने देश वासियों के

पथ-प्रदर्शक बनें और उन्हें यह याद दिलावें कि यदि व्यक्तियों के अधिकार होते हैं तो साथ ही राष्ट्र के प्रति कर्तव्य भी होते हैं। स्वाधीनता उच्छृङ्खलता (मनमानी) को नहीं कहते और अराजकता से देश की उन्नति नहीं होती। * * * प्रजा प्रतिनिधि सभा (पारलियामेण्ट) में श्रीमान् (महाराजा साहब) ने बीकानेर के निवासियों को रियासत की नीति को ब्यौरेवार सीखने और उसकी खोज करने का अवसर दिया है और यदि वे राजनीति को बस मे नहीं रखते तो कम से कम यह तो अवश्य समझते हैं कि वो उनसे छिपी नहीं है। स्वराज के जोश में बहुधा जिस बात पर ध्यान नही दिया जाता वो श्रीमान् ने अच्छी तरह जान लिया है। वो यह है कि धीरे २ आगे बढ़ना जरूरी है और अन्य कलाओ की तरह राज्यकला भी सीखनी पड़ती है। जिस प्रकार इस संस्था का प्रारम्भ अच्छा हुआ है वो यदि बुद्धिमानी से चलाई जायगी तो इस से बीकानेर सरकार और बीकानेर के लोगों का परस्पर वास्तविक संबंध बढ़ जायगा और उस सम्बन्ध से मुझे विश्वास है कि आपके राज्य घराने की निर्बलता नहीं होगी परन्तु बल की वृद्धि होगी। रियासतो का भविष्य मनुष्यों और संस्थाओं दोनों पर निर्भर है।"

"...There is thus a great obligation resting on the Ruling Princes who possess such experience to guide their fellow-countrymen in the path of self-Government by reminding them that duties to the State exist as well as rights of the individual, that liberty does not mean license, and that firm government and not anarchy is the true condition of progress. ...In the representative Assembly your Highness has given to the people of Bikaner the opportunity of enquiry into and learning details of State policy and if they do not control

that policy they are at any rate feel it is not concealed from them. Your Highness has seen what in the enthusiasm for self-Government is too often over-looked the necessity of hastening slowly and that like all other arts that of Government requires to be learnt: From this institution wisely directed as it has been wisely begun may develop the actual association of the people of Bikaner in the Government of their State—an association which I am confident will be source not of weakness but of strength to the Ruling House. The future of States however depends on men as well as an institution.

हिज एक्सीलेंसी लार्ड कर्जन का कथन है कि:-

कोई भी देशी नरेश तुच्छ और जवाबदिही से वरी मनमौजी नहीं रह सकता। जो हकूमत उसके जिम्मे रखी गई है उसके लायक सावित करे, न कि उसका वेजा इस्तैमाल करे। उसे अपनी प्रजा का मालिक और नौकर दोनों होना चाहिये। उसे यह समझ लेना चाहिये कि उसकी आमदनी माल उसके खुदग़र्ज ख्वाइश पूरी करनेके लिये नहीं है बल्कि उसकी प्रजा की भलाई के वास्ते है। और उसका अन्दरूनी राज बंदोवस्त उस हद तक सुधार से वरी है जहां तक कि वह सादिक या खरा है। उसका राजसिंहासन इन्द्रिय लोलुपता की मखमली गद्दी नहीं है लेकिन अपने कर्तव्य की कठोर काठी है। उसकी मूर्ति सिर्फ खेल के मैदान (पोलो) में या घुड़दौड़ में या यूरोपीयन होटल में देखी जाने वाली नहीं है। उसका असली काम, उसका राजकीय फ़र्ज अपने लोगो के साथ है। इसी पैमाने से मैं उसको जांचूंगा। इसी कसौटी के जरिये वह आखिर में वतौर राजनैतिक संस्था के नष्ट होगा या जिन्दा रहेगा। मेरा उद्देश्य

तितली के जैसा नहीं है कि जो बेकाम एक फूल से दूसरे फूल पर उड़ती है बल्कि काम करने वाली मधुमक्खी है कि जो अपना छत्ता बनाती और खुद अपना शहद इकट्ठा करती है। ऐसे मनुष्य के साथ मेरी हार्दिक सहानुभूति और प्रशंसा है। वो अपनी प्रजा का प्यारा है और अंग्रेज सरकार को भी प्यारा है कि जिसका मैं प्रतिनिधि हूं। ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ हालां कि यह है मुश्किल लेकिन जरूरी है कि पबलिक और खानगी खर्चे में साफ २ भेद रखा जावे और यह याद रहे कि रियासत की आमदनी प्रजा की है न कि नरेश की और वो अगर एक शकल में उनसे ली गई है तो बहुधा दूसरी शकल मे उन्हें वापिस देना चाहिये।

.........अच्छे और बुरे नरेशों में फर्क क्या है? अच्छे नरेशों के लिये तो उपयोगिता, कीर्ति और यश का रास्ता खुल जाता है और बुरे राजा शीघ्र ही नष्ट हो जावे हैं। और उनका विचार तक लोगों के दिमाग़ से उड़ जाता है।

किसी कामयाब नरेशकी जिन्दगी ऐसी नहीं होनी चाहिये कि जिसमें ठहर ठहर कर जोश के झोके हों, कभी तो फुर्ती और भलाई की लहर हो और कभी उदासीनता मे परिवर्त्तन उतार हो। ❀ ❀ ❀ यह साफ़ कि उनको ज़माने के ढंग के साथ २ काम करना व चलना होगा। वे पिछड़ नहीं सकते और जो अनिवार्य्य उन्नति हो रही है उसके लिये भार रूप न बनें। शाही राज्य की शृंखला में वे कड़ियो के मानिन्द हैं। यह कभी नहीं होना चाहिये कि वृटिश कड़ियें तो मजबूत हों और देशी कड़ियें कमज़ोर या उससे विपरीत । जैसे शृङ्खला लंबी होती जाती है और उसके हरेक हिस्से पर ज्यादा जोर पड़ता जाता है, वैसे ही गुण और रेशों की समानता आवश्यक है। यदि ऐसा नहीं है तो लड़ियें टट जायँगीं। इसलिये मेरा ख्याल है और मैं इस बात को देशी नरेशों पर जमा देने में ढील नहीं करता कि उन पर एक बहुत साफ और निश्चित फर्ज का भार है। वो सिर्फ उनके खानदान व राज को सदा के लिये

वनाये रखने का ही नहीं है। उन्हें इस पर संतोष नहीं कर लेना चाहिये कि अपने जमाने में वातें गुजार दी जांय। उन का सिर्फ यह फ़र्ज नहीं है कि शाही राज्य प्रणाली में निश्चित स्थान उदासीनता से ग्रहण करलें वल्कि यह है कि जो उत्तर-दायित्व और भार है उसको सचेत और सवल सहयोग द्वारा पूर्ण करें।

"A native chief can not remain a frivolous or irresponsible despot. He must justify and not abuse the authority committed to him; he must be the servant as well as the master of his people. He must learn that his revenues are not secured to him for his own selfish, gratification but for the good of his subjects that his internal administration is only exempt from correction in proportion as it is honest and that his *gadi* is not intended to be a divan of indulgence, but the stern seat of duty. His figure should not merely be known on the polo-ground, or on the race course, or in the European hotel. His real work, his princely duty lies among his own people." By this standard shall I, at any rate, judge him. By this test will he in the long run as a political institution perish or survive. "My ideal has never been the butterfly that flits aimlessly from flower to flower but the working bee that builds its own hive and makes its own honey. To such a man all my heart goes out in sympathy and admiration. He is dear to his own people, dear to the Govern-

ment whom I represent" ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀"There is the difficulty but the necessity, of maintaining a clear line between public and private expenditure and of remembering that the resources of the state belong to the people, and not to the chief; and if contributed by them in one form, ought for the most part be given back in another." ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ "What is the difference between a good and an inferior chief......To those who belong to the former class opens out a vista of usefulness and honour and renown, while the latter are speedily wiped out and perish from the thoughts of men. The life of a successful ruler cannot be a succession of fits and starts, now a spurt of activity and well-doing, and then a relapse into apathy or indifference." ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ "It is obvious that they must keep pace with the age. They cannot dwadle behind and act as a drag upon an inevitāble progress. They are links in the chain of imperial administration. It would never do for the British links to be strong and the native links, weak or *vice versa*. As the chain goes on lengthening and the strain put upon every part if it increases so is uniformity of quality and fibre essential. Otherwise the unsound links will snap. I, therefore, think, and I lose no opportunity of impressing upon the Indian chiefs that a very clear and positive duty devolves upon them. It is not

limited to the perpetuation of their dynasties or the maintenance of their Raj. They must not rest content with keeping things going in their time. Their duty is one, not of passive acceptance of an established place in the imperial system, but of active and vigorous co-operation in the discharge of its numerous responsibilities."

—H. E. Lord Curzon, 1904.

हिज़ एक्सीलेंसी लार्ड चैम्सफोर्ड वाइसराय ने देशी राज्यों के लिये चेतावनी देते हुये यह कहा है कि:—

"जिस हलचल के ज़माने में हम रहते हैं और गत कुछ महीनों की घटनाओं को देखते हुए यह भाव प्रबल होता है कि प्रजा के हित का ख्याल रखे बिना स्वच्छन्दता पूर्ण राज्य करने से क्या क्या ख़तरा है ? दुनिया के अधिकतर देशों में इस ख़तरे के ख्याल से ही किसी एक राजा के स्वच्छन्द अख़्त्यार की जगह प्रजातन्त्र राज्य की स्थापना हुई है। चूंकि ब्रिटिश गवर्नमेंट उनकी रक्षा करती है इसलिये देशी राज्यों के नरेश अपनी प्रजा की भलाई पर निज़ी अख़्त्यार वहुत ज्यादा रखते हैं और इसलिये उसी प्रकार उनकी जिम्मेवरी ज्यादा है।"

"The stirring times in which we live particularly the events of the past few months, have emphasized the danger that attends the exercise of the autocratic rule without proper regard to the interests of the people. In the vast majority of the countries of the world the realisation of this danger has led to the substitution of government by the people for the uncontrolled authority of an

individual sovereign. The rulers of the Indian States, in virtue of their protection by the British Government, enjoy an unusual degree of personal control over the welfare of their subjects and the responsibility that lies upon them is correspondingly great."

हिज एक्सीलेंसी लार्ड रीडिंग वाइसराय आफ़ इंडिया ने जोधपुर नरेश को पूर्ण शासन अधिकार देते हुये २७ जनवरी सन् १६२३ ई० (माघ सुदी १० सं० १६७६ वि०) के जोधपुर दरबार में यह कहा:—

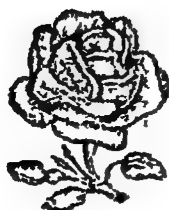
"* * * शिक्षा में अब तक जैसी चाहिये वैसी तरक्की नहीं हो सकी है। इस मद मे खर्च बढ़ा कर प्राय: १ लाख किया गया है तो भी राज्य की आमदनी की तुलना से खर्च कम है। महाराजा बहादुर को चाहिये कि वे इस विभाग की ओर विशेष ध्यान दें क्योंकि शिक्षा के बिना राज्य की उन्नति नही हो सकती। और दरबार की यह इच्छा कि मारवाड़ निवासी ही राज्य के ओहदो पर नियुक्त हो तभी पूरी होगी जब शिक्षा के लिये पूर्ण सुप्रबन्ध किया जायगा। * * * शासन कार्य अब जैसा कठिन और जटिल होगया है वैसा कभी नहीं था। महायुद्ध के बाद से संसार में बहुत बड़ा परिवर्त्तन हुआ है। पुराने विचार जाते रहे है। पुरानी प्रथाओ की कड़ी आलोचना हुई है। इस तरह की अशान्ति शुभ का ही लक्षण है पर परिवर्त्तन का समय शासको के लिये बड़ा कठिन है। जितने मे लोगों के पूर्व पुरुष सन्तुष्ट थे उतने मे अब लोग सन्तुष्ट नहीं होते। आपके सरदार और प्रजाजन भी वर्त्तमान युग की उन्नति की दौड़ मे पीछे रहना पसन्द नहीं करेंगे। समय की गति मे न तो आप ही पीछे रह

सकेंगे और न अपनी प्रजा को ही रख सकेंगे। उनकी उच्च आकांक्षाओं पर ध्यान देना ही उचित होगा। तरह तरह की कठिनाइयां उपस्थित होंगी जरूर पर दूरदर्शिता, साहस और बुद्धिमत्ता से उनका सामना करने से वे आपसे आप दूर हो जायँगी। यदि आप लोगो के हित पर ही सदा दृष्टि रखेंगे और न्याय और सहानुभूति से राज करेंगे तो भविष्य में आपको कोई भय नहीं रहेगा।"

"Education is still backward and, though expenditure on this object has been increased by nearly a lakh, it remains disproportionate to the total revenues. Your highness may wisely direct special attention to the improvement of this branch of the administration, for a State cannot progress without education, and better educational facilities must be provided if the Darbar's laudable desire to fill ministration with Jodhpur subjects is to be satisfied. ❀ ❀ ❀

"The business of government is more difficult and complex to-day than it has ever been. There has been a change in the world since the Great War. Old ideals have been disturbed, old methods have been criticised. This unsettlement of ideas has its influence for good, but a period of transition and change inevitably brings difficulties to the task of the administrator. People are no longer content with the same standards which satisfied their forefathers, and your Sardars and people will expect to share in the moral and material advancement of the present day.

"You will not be, sir, nor can you expect your State to remain, aloof and unaffected by the march of events. Seek then to understand and to look with sympathy upon new hopes and aspirations. Difficult problems will arise but they will lose half their difficulty if you meet them with courage, and at the same time prudence and insight, and you need have no fear for the future if you try to govern with a single eye to the well-bring of your subjects, and above all with justice and sympathy."



भारत की मुख्य २ रियासतों और अंगरेज़ सरकार के बीच में हुई वर्षवार सन्धियों की तालिका

नाम रियासत	तारीख़ सन्धि [अहदनामा]	क़िस्म सन्धि	विशेष विवरण
१–सांवतवाड़ी [बम्बई प्रान्त]	माघ बदी ४ सं० १७८६ वि० [ता० १२–१–१७३० ई०]	आंगेरिया के जलडाकुओं के विरुद्ध आक्रमक offensive और रक्षक defensive मैत्री।	यह सन्धि लगातार तोड़ी जाने पर दूसरी सन्धियाँ स्थापित की गईं।
२–जंजिरा [बम्बई प्रान्त]	मगसिर सुदी ११ स० १७९० वि० [ता० ६–१२–१७३१]	साधारण मैत्री और विशेषकर दरयाई डकैती के विरुद्ध।	
३–पूना [बाजीराव पेशवा]	श्रावण बदी ११ स० १७९६ वि० [ता० २०–७–१७३९ ई०]	समुद्रीय और व्यापारिक सन्धि।	
४–हैदराबाद [दक्षिण]	वैशाख सुदी १५ स० १८१६ [ता० १४–५–१७५९]	परस्पर उदासीनता का वचन अर्थात् तटस्थता।	सं० १८२३ वि० [सन् १७६६ ई०] में सन्धि बाबत सरकार और सैनिक मैत्री।
५–जाफराबाद [काठियावाड़]	पौष बदी द्वितीय १२ सं० १८१७ वि. [ता० ३–१–१७६१]	मैत्री और अङ्गरेज़ी जंगी जहाज़ों के बेड़े का बचाव।	जंजीरा की मातहत जागीर।

६–तंजोर [मदरास प्रान्त]	कार्तिक वदी १० स० १८१९ [ता० १२–१०–१७६२ ई०]	करनाटक और तजोर के बीच अधीनस्थ कौल करार की गारटी।	पहिले पहल सीधा अहदनामा ईस्ट इडिया कम्पनी के साथ स० १८३३ वि० [सन् १७७६ ई०], में हुआ। नाम मात्र की राजा पदवी स० १९१२ वि० [सन् १८५५ ई०] में मिट गई।
७–मनीपुर	सं० १८१९ वि० [सन् १७६२ ई०]	रक्षक मैत्री।	स० १८१९ वि० [सन् १७६२ई०] की सन्धि लो गई। पहली सन्धि जो मौजूदा है वह सं० १८९० वि० [१८३३ ई०] की है।
८–मैसूर [हैदरअली के मातहत]	चैत्र सुदी १३ स० १८२० वि० [ता० २७–५–१७६३ ई०]	परस्पर सहायता।	बम्बई गवर्नमेण्ट ने की।
९–अवध [सयुक्त प्रान्त]	भादों वदी ३० सं० १८२२ वि० [ता० १६–८–१७६५ ई०]	गाढ़ मित्रता।	सं० १९१३ वि० [सन् १८५६ ई०] में अंग्रेज़ी राज्य में मिलाया गया।
१०–टिपरा [पूर्व बंगाल में]	स० १८२२ वि० सन् [१७६५ ई०]	मातहती मजूर की।	कोई सन्धि नहीं हुई।
११–कोलहापुर	माघ सुदी २ सं० १८२२ वि० [ता० १२–१–१७६६ ई०]	गाढ़ मित्रता।	जलडाकुओं को दमन करने के हमले के पश्चात् की गई है।

नाम रियासत	तारीख़ सन्धि [अहदनामा]	क़िस्म सन्धि	विशेष विवरण
१२-केम्बे (गुजरात)	वैशाख सुदी ६ स० १८२८ वि० [ता० २३-४-१७७१ ई०]	जलडाकू कोलियों के खिलाफ़ सन्धि।	नव्वाब ने खुद अपने को कम्पनी का सेवक माना।
१३-कूचबिहार (बंगाल)	चैत्र सुदी १३ स० १८३० वि० सोम [ता० ५-४-१७७३ ई०]	मातहती मंजूर की।	
१४-भूटान	प्रथम वैशाख सुदी १४ सं० १८३१ वि० सोम० [ता० २५-४-१७७४]	शान्ति की सन्धि।	
१५-धौलपुर (राजपूताना)	मगसिर वदी १० सं० १८३६वि० ता० २-१२-१७७६ ई०	स्थायी मित्रता।	सलवाई की सन्धि के बाद धौलपुर छोड़ा गया। सन् १८०६ ई० से इसके साथ स्थायी सन्धि मानी गई।
१६-गवालियर (मध्यभारत)	कार्तिक वदी ११ स० १८३८ वि० [ता० १३-१०-१७८१ ई०]	शान्ति और मित्रता की सन्धि।	सरज अजन गांव की सन्धि माघ वदी २ सं० १८६० वि० [ता० ३०-१२-१८०३ ई०] को हुई।
१७-नागपुर या बरार (वर्तमान मध्य प्रान्त)	स० १८३८ वि०(ई० स० १७८१)	मित्रता और फ़ौजी सन्धि।	

१८–कर्नाटक या अरकोट	फागुण सुदी ७ सं० १८४३ वि० शनि (२४–२–१७८७)	स्थायी मित्रता।	सन् १७५४ ई० में फ्रान्स वालों के साथ संधि हुई जिससे मुहम्मदअली कर्नाटक का नव्वाब होगया। नवाब ने सन् १८०१ ई० में राजपाट त्यागा। वैशाख १८९१ वि० (मई सन् १८३४ ई०) में रियासत अंग्रेज़ी अमलदारी में मिलाली गई।
१९–कुर्ग	कार्तिक वदी ३ सं० १८४७ मंगल (२६–१०–१७९०)	टीपू सुल्तान के खिलाफ मित्रता और सहायता की सन्धि।	
२०–कोचीन (मद्रास प्रान्त)	पौष सुदी २ सं० १८४७ (ता० ६–१–१७९१)	मातहती और मित्रता।	
२१–रामपुर (यू० पी०)	माघ वदी ८ सं० १८५१ (ता० १३–१२–१७९४)	कौलकरार की सन्धि।	रोहिलाओं की लड़ाई के बाद सन् १७७४ ई० में कम्पनी ने भी कौलकरार किया।
२२–ट्रावनकोर (मद्रास प्रान्त)	कार्तिक सुदी ६ सं० १८५२ (१७–११–१७९५)	मित्रता की सन्धि।	सन् १७९५ की कौलकरार पूरे न होने पर सन् १८०५ ई० में सन्धि में कुछ नई बातें बढ़ाई गईं।

नाम रियासत	तारीख़ सन्धि (अहदनामा)	क़िस्म सन्धि	विशेष विवरण
२३-मैसूर (वर्तमान राज वंश के मातहत)	आषाढ़ सुदी ६ सं० १८५६ सोमवार (८-७-१७९९ ई०)	रक्षा और आधीनता की।	
२४-बड़ौदा	जेठ सुदी ६ सं० १८५९ रवि० (६-६-१८०२ ई०)	अच्छा समझौते और मातहती की सन्धि सुदृढ़ करने का वचन।	
२५-बांसदा	पौष सुदी ७ सं० १८५९ शुक्र (३१-१२-१८०२ ई०)	पेशवा के साथ बसीन की संधि हुई उसके अनुसार मातहत रखा गया।	माघ बदी ४ सं० १८३६ वि० (२६-१-१७८० ई०) की पहली सन्धि खारिज की गई और फिर सलवाई की सन्धि की गई।
२६-पुड्डु कोटा	श्रावण बदी ४ सं० १८६० शुक्र (८-७-१८०३ ई०)	सनद दी गई।	
२७-भरतपुर	आसोज बदी २ स० १८६० वि० (ता० ३-९-१८०३ ई०)	स्थायी मित्रता।	कौलकरार के तोडने पर सन्धि भंग हुई और सन् १८०५ में फिर की गई।

२८—अलवर (राजपूताना)	मगसिर वदी ३० सं० १८६० (१४-११-१८०३ ई०)	हमले और बचाव की सन्धि ।	
२९—सूंठ (बंबई रेवाकांटा प्रान्त)	पौष सुदी १ स० १८६० (१५-१२-१८०३ ई०)	खिराज की सन्धि ।	लूनावाड और यह सन्धि लार्ड कार्नवालिस ने रद्द कर दी ।
३०—बरिया (बम्बई प्रान्त)	माघ वदी २ स० १८६० (३०-१२-१८०३)	रक्षा की सन्धि ।	सन्धिया के सन्धि के साथ जो सन्धि की गई उसके द्वारा ।
३१—दतीया (बुंदेलखड)	प्रथम चैत सुदी ४ सं० १८६० गुरुवार (१५-३-१८०४)	मित्रता और मातेहती ।	सन् १८१८ ई० मे रक्षा की सन्धि ।
३२—चरखारी (बुंदेलखंड)	आषाढ़ सुदी १३ सं० १८६१ शुक्र० (२०-७-१८०४)	मातहती स्वीकार करने पर रियासत दी गई ।	
३३—इन्दौर (मालवा)	पौष वदी ८ सं० १८६१ (२४-१२-१८०५ ई०)	शान्ति और मित्रता की सन्धि ।	लार्ड लेक के लिखाने मुताबिक़ ।
३४—छतरपुर	वैशाख वदी १ सं० १८६३ वि० (४-४-१८०६ ई०)	सनद दी गई ।	
३५ महियर (मैहर) (बघेलखंड में)	कार्तिक सुदी ८ सं० १८६३ मंगल० (१८-११-१८०६ ई०)	सनद दी गई ।	

नाम रियासत	तारीख सन्धि (अहदनामा)	क़िस्म सन्धि	विशेष विवरण
३६-बावनी (मुसलमानी राज्य)	मगसिर सुदी १४ सं० १८६३ (२४-१२-१८०६ ई०)	रुक्का दिया गया।	
३७-पन्ना (बुंदेलखंड)	माघ बदी १२ स० १८६३ वि० (४-२-१८०७ ई०)	सनद से बहाल रखी गई।	
३८-अजयगढ़	जेठ सुदी १ सं० १८६४ रवि० (८-६-१८०७ ई०)	सनद से बहाल रखी गई।	
३६-काठियावाड़ के रईस (अव्वलदर्जे के रईस जूनागढ़, नवानगर (जामनगर) पोरबन्दर, भावनगर धरांगदरा, मोरवी और गोंडल के राजा महाराजा हैं।)	सं० १८६४ विक्रमी (सन् १८०७ ई०)	बदफैली के लिए मुचलके खास २ नरेशों ने लिखे जब कि सन् १८०७ में अंग्रेजी और गायकवाड़ की फ़ौजें काठियावाड़ पर चढ़ीं।	

४०—नागोद (बघेलखड)	चैत्र बदी १० सं० १८६६ शनि० (११–३–१८०६ ई०)	मातहती ।	
४१—लाहौर	वैशाख सुदी १० स० १८६६ मंगल (२५–४–१८०६ ई०)	मित्रता की सन्धि जो लार्ड मेटकाफ के द्वारा की गई ।	हुल्कर के बिरुद्ध ख़ास सन्धि पौष सुदी ११ स० १८६२ (ता० १–१–१८०६ ई०) में की गई ।.
४२—सतलजनदी के बांयी तट के नरेश (पजाब)	जेठ बदी ४ सं० १८६६ बुध० (३–५–१८०६ ई०) Cis-Sutlej Chiefs	गारंट या प्रतिज्ञा की घोषणा जिससे लाहौर से धावा न हो ।	मुख्य रियासतें जिनके साथ बाद में सन्धियां हुई वे पटियाला, जिंद, नाभा, कलसिया, मालरकोटला और फरीदकोट हैं ।
४३—दक्षिण सिन्ध प्रान्त	श्रावण सुदी १२ सं० १८६६ (२२–८–१८०६ ई०) (Lower Sindh)	तीनों अमीर मीरगुलामअली, मीर कदीमअली, मीरमुरादअली के साथ सदा के लिये मित्रता की गई ।	टालपुर वंश को व्योपारिक अधिकार वैशाख १८५७ वि० (अप्रेल १८०० ई०) में दिये गये ।
४४—बीजावर (बुन्देलखड)	चैत्र सुदी ३ सं० १८६८ (२७–३–१८११ ई०)	तावेदारी स्वीकार करने पर सनद दी गई ।	

नाम रियासत	तारीख सन्धि (अहदनामा)	क़िस्म सन्धि	विशेष विवरण
४५–महीकांठा एजेन्सी ईडर और अन्य राज्य (बम्बई प्रान्त)	सन् १८१२ ई० (वि० सं० १८६९)	मुचलके के जरिये बंदोबस्त किया गया।	रेवाकांटा की कुछेक रियासतें इस बंदोबस्त में मिलाईं गईं।
४६–नवानगर (जामनगर)	फाल्गुण सुदी ११ सं० १८६८ (२३ फ़रवरी १८१२ ई०)	तावेदारी।	
४७–रीवां	आसौज वदी ३०. सं० १८६६ (५–१०–१८१२ ई०)	रक्षा।	
४८–ओरछा	पोष वदी ६ सं० १८६६ (२३–१२–१८१२ ई०)	मातहती मित्रता।	
४९–राधनपुर	पौष वदी ९ सं० १८७० (१६–१२–१८१३ ई०)	बड़ौदा के साथ सम्बन्ध सन्धि द्वारा स्थापित किये गये।	

द्वितीय काल

५०-पंजाब की पहाड़ी रियासतें	आसौज वदी ३ सं० १८७२ (२१-९-१८१५ ई०)	सनद हकी जैसा कि रियासत सिरमौर को दिया।	नेपाल के साथ युद्ध का फल।
५१-पटियाला	कार्तिक वदी ३ सं० १८७२ शनि० (२०-१०-१८१५ ई०)	सनद जिससे रियासत दी गई।	
५२-कच्छ (बम्बई प्रान्त)	पौष सुदी १५ सं० १८७२ सोम० (ता० १५-१-१८१६ ई०)	रक्षा और मातहती की मित्रता।	जलडाकुओं को दमन करने के लिये १८०९ ई० में अहदनामे किये गये।
५३-नेपाल	फागुण सुदी ५ सं० १८७२ वि० सोम० (ता० ४-३-१८१६ ई०)	शान्ति और मित्रता की सन्धि।	जो सन्धि सन् १८१५ में की गई उसको तसदीक करने में नेपाल की तरफ से कुछ ढील हुई।
५४-शिकम	फागुण वदी ९ स० १८७३ वि० (१०-२-१८१७ ई०)	मातहती मित्रता।	
५५-टौंक	कार्तिक वदी ३० सं० १८७४ रवि० (९-११-१८१७)	प्रतिज्ञा की सन्धि और मातहती मित्रता।	पिंडारियों के साथ लड़ाई का प्रथम फल।
५६-करौली	कार्तिक वदी ३० सं० १८७४ रवि० (ता० ९-११-१८१७ ई०)	रक्षाधीन।	

नाम रियासत	तारीख़ सन्धि (अहदनामा)	क़िस्म सन्धि	विशेष विवरण
५७—समथर (मध्यभारत)	कार्तिक सुदी ४ सं० १८७४ (१२—११—१८१७ ई०)	मातहती।	
५८—पालनपुर	मगसिर बदी ४ सं० १८७४ वि० (२८—११—१८१७)	मातहती की बीच बचाव की सन्धि।	मातहती की सन्धि सन् १८०९ में की गई।
५९—भोपाल	मगसिर सुदी १५ सं० १८७४ (२३—१२—१८१७)	मातहती मित्रता रुक्के से स्थापित की गई।	सन् १८०९ ई० में भोपाल से सन्धि करने से इन्कार किया गया था।
६०—कोटा (राजपूताना)	पौष बदी २ सं० १८७४ (२५—१२—१८१७ ई०)	रक्षाधीन राज्य।	
६१—छोटानागपुर के ख़िराजी महाल (बंगाल में)	सन् १८१७ से १८२५ ई० तक	ये राज्य सन् १८१७ में दिये गये और नरेशों से मातहती की सन्धि की गई।	

६२-जावड़ा	पौप वदी ३० सं० १८७४ मंगल (६-१-१८१८ ई०)	हुलकर के साथ सन्धि की गईं उसके द्वारा रक्षा की गई।	
६३-जोधपुर	पौप वदी ३० सं० १८७४ वि० मगल (ता० ६-१-१८१८ ई०)	रक्षाधीन राज्य (Protectorate)	पहिले की मित्रता व परस्पर मेलकी सन्धि जो पौष सुदी ८ स० १८६० वि० (२२-१२ सन् १८०३ ई०) में हुई वो खारिज की गई।
६४-उदयपुर	पौप सुदी ७ स० १८७४ मंगल (१३-१-१८१८ ई०)	" "	
६५-बूंदी	माघ सुदी ५ सं० १८७४ मंगल (१०-२-१८१८ ई०)	" "	
६६-बीकानेर (राजपूताना)	फागुण सुदी ३ सं० १८७४ चन्द्रवार (६-३-१८१८ ई०)	" "	सन् १८०८ ई० में सन्धि की प्रार्थना नामंजूर की गई।
६७-किशनगढ़	चैत बदी ४ सं० १८७५ गुरु० (२६-३-१८१८ ई०)	" "	
६८-जैपुर (राजपूताना)	चैत्र बदी १२ सं० १८७५ गुरु० (२-४-१८१८ ई०)	" "	पहिले की सन्धि जो १२ दिसम्बर सन् १८०३ ई०(१४ पोष १८६० वि०) में हुई ख़ारिज की गई।

नाम रियासत	तारीख़ सन्धि (अहदनामा)	क़िस्म सन्धि	विशेष विवरण
६९–प्रतापगढ़ (राजपूताना)	आसौज सुदी ६ सं० १८७५ (५–१०–१८१८ ई०)	रक्षाधीन राज्य	पहिले की सन्धि ख़ारिज की गई।
७०–अलीराज–पुर	मगसिर सुदी ११ सं० १८७५ (८–१२–१८१८)	बीच बचाव किया गया।	मध्यभारत का हिस्सा राजनीति के प्रबंध में है।
७१–डूंगरपुर	मगसिर सुदी ११ सं० १८७५ (११–१२–१८१८ ई०)	रक्षाधीन राज्य।	
७२–देवास (मालवा)	मगसिर सुदी १५ सं० १८७५। (१२–१२–१८१८ ई०)	" "	जिस तारीख को बड़े लाट साहब ने सन्धि तसदीक की वह तारीख दी गई है।
७३–जैसलमेर	मगसिर सुदी १५ सं० १८७५ (१२–१२–१८१८ ई०)	" "	
७४–बांसवाड़ा (राजपूताना)	पौष वदी १३ सं० १८७५ (२५–१२–१८१८ ई०)	" "	

७५-पश्चिमी मालवा रतलाम सीतामऊ सैलाना	पौष सुदी १० स० १८७५ मंगल (५-१-१८१६ ई०)	उनकी रक्षा के लिये सन्धि सर जोन मेलकोम के बीच बचाव से हुई। ये रक्षाधीन राज्य है।	
७६-धार (मालवा)	पौष सुदी १४ सं० १८७५ (१०-१-१८१६ ई०)	रक्षाधीन राज्य।	
७७-सतारा	आसोज सुदी ६ सं० १८७६ वि० शनि० (२५-६-१८१६ ई०)	लार्ड हैस्टिंग ने रियासत बनाई।	जब्त की गई।
७८-टेहरी गढ़वाल	चैत्र बदी ५ सं० १८७६ शनि० (४-३-१८२० ई०)	राज्य वापिस दिये जाने की सनद नेपाल की लड़ाई के बाद दी गई।	भादों सुदी १० सं० १९१६ वि० (६-६-१८५६) को पुनः सनद दी गई।
७९-झाबुआ	भादों बदी १० सं० १८७८ बुध० (२२-८-१८२१ ई०)	सन्धि द्वारा प्रतिज्ञाबद्ध।	
८०-राजपीपला (रेवाकांठा-गुजरात)	आसोज सुदी १५ स० १८७८ (ता० ११-१०-१८२१ ई०)	अंग्रेज़ सरकार के प्रबंध को स्वीकार करने में रजामंदी।	वैशाख बदी ५ स० १८७७ वि० (३-४-१८२० ई०) को वड़ौदा रिया-

नाम रियासत	तारीख़ सन्धि (अहदनामा)	क़िस्म सन्धि	विशेष विवरण
			सत ने प्रतिज्ञा की कि काठियावाड़ और माहीकांठा के नरेशों और प्रजा पर सिवाय अंग्रेज़ सरकार के जरिये कोई अधिकार नहीं जमावेंगे।
८१–छोटा उदैपुर (रेवाकांठा–गुजरात)	कार्तिक सुदी ७ सं० १८७६ (ता० २१–११–१८२२ ई०)	मातहती की सन्धि।	यह सन्धि इस सन्देह पर की गई कि उपरोक्त सन्धि इस रियासत के लिये लागू है या नहीं।
८२–सीरोही (राजपूताना)	भादों सुदी ७ सं० १८८० गुरुवार (११–६–१८२३ ई०)	रक्षाधीन राज्य।	इस राज्य पर जोधपुर का उजर था इसलिये इसको अधीन राज्यों में शामिल करने में देर हुई।
८३–अवा (बर्मा देश में)	फागुण बदी २ सं० १८८२ वि० (२४–२–१८२६ ई०)	शान्ति और मित्रता की सन्धि।	
८४–म्युरभंज और उड़िसा के दूसरे खिराजीछोटे राज्य	ज्येष्ठ १८८३ वि० (जून १८२६)	मातहती की सन्धि।	

८५-खैरपुर (सिन्ध)	चैत्र सुदी ४ सं० १८८६ (४-४-१८३२ ई०)		
८६-भावलपुर (पंजाब)	माघ सुदी १३ सं० १८८६ (२-२-१८३३ ई०)	मित्रता और व्यौपार की सन्धि व्यापार वृद्धि के लिये सदा की मित्रता।	
८७-झालावाड़ (राजपूताना)	चैत्र सुदी १४ सं० १८६५ (८-४-१८३८ ई०)	रक्षा।	यह रियासत कोटा राज्य में से बनाई गई।
८८-काश्मीर	चैत्र वदी ३ सं० १६०२ सोम० (१६-३-१८४६ ई०)	यह रियासत लाहौर रियासत के बिगड़ने पर बनाई गई।	
८६-सतलज नदी (पंजाब में) के उस पार यानी दाहिनी तट के राज्य Trans-Sutlej States	आसोज १६०३ वि० (अक्टूबर १८४६ ई०)	तसलीम या इकरार।	सनद की तारीखें भिन्न हैं। मंडी के राजा की सनद में जो तारीख है सो दी गई है।
६०-जींद (पंजाब में)	भादों सुदी १३ सं० १६०४ बुध (२२-६-१८४७)	पंजाब की लड़ाई के बाद नई जागीरें अता की गईं।	
६१-शाहपुरा (राजपूताना)	आषाढ़ बदी ११ सं० १६०५ वि० मंगल (२७-६-१८४८ ई०)	रक्षा।	

शाही घोषणाएं

(Royal Proclamations)

(१)

हम भारतवर्ष के राजाओं को इस घोषणा द्वारा विदित करते हैं कि आनरेबल ईस्ट इण्डिया कम्पनी से की हुई उसकी सन्धियां (अहद-नामे) और क़रारनामे हम स्वीकार करते हैं। हम उनके पूरे तौर से पाबन्द रहेंगे और आशा करते हैं कि राजा लोग भी ऐसा ही करेंगे।

हम अपने राज्याधिकारों को बढ़ाना नहीं चाहते और वैसे ही हमारे राज्य और अधिकारों पर भी दूसरों को नाजायज सिक्का न जमाने देंगे तथा साथ ही दूसरे देशी राज्यों पर हमला भी न होने देंगे। हम देशी राजाओं के अधिकार, मान और ऐश्वर्य का हमारे ही अधिकारों की तरह आदर करेंगे और हमारी यह इच्छा है कि राजा लोग और हमारी प्रजा भी वह सुख और सामाजिक उन्नति के फलों को भोगें—कि जो आन्तरिक शान्ति एवं श्रेष्ठ शासन के बिना प्राप्त नहीं हो सकते।

१ नवम्बर १८५८ ई० —हर मेजेस्टी महारानी विक्टोरिया।

" We hereby announce to the Native Princes of India that all treaties and engagements made with them by or under the authority of the Honourable East India Company are by us accepted, and will be scrupulously maintained; and we look for the like observance on their part.

" We desire no extension of our present territorial possessions; and, while we will permit no aggressions upon our dominions or our rights to be attempted with impunity, we shall sanction no encroachment

on those of others. We shall respect the rights, dignity and honour of Native Princes as our own, as we desire that they, as well as our own subjects, should enjoy that prosperity and that social advancement which can only be secured by internal peace and good Government."

Nov. 1, 1858. Her Majesty Queen Victoria.

(२)

जबसे मैं मेरी पूजनीया माता भारत की प्रथम राजराजेश्वरी, स्वर्गीय महारानी विक्टोरिया के राज सिंहासन पर बैठा हूं तभी से मेरी इच्छा है कि उस परोपकार शील एवं न्याय परायण शासन प्रणाली को कि जिससे वह भारतीय प्रजा के उस प्रेम और पूजा की पात्र बनी थी पूरी तौर से जारी रखूं।

भारत के सब राजाओं एवं प्रजा को मैं फिर विश्वास दिलाता हूं कि हम उन के स्वातन्त्रय का आदर करते हैं—उन के मान और अधिकारों की इज्जत करते हैं। उनकी उन्नति में हम अनुरक्त हैं। उनकी रक्षा में तत्पर हैं। उपयुक्त वर्त्ताव मेरे शासन का मुख्य लक्ष्य रहेगा और ईश्वर की दया से भारतीय राज्य और उस की प्रजा को सुखों के शिखर पर पहुंचायेगा।

२३ जनवरी १९०१ ई० —हिज मेजेस्टी किंग एडवर्ड सप्तम।

"My desire, since I succeeded to the throne of my revered mother, the late Queen Victoria, the First Empress of India, has been to maintain unimpaired the same principles of humanic and equitable administration which secured for her in so wonderful a degree the veneration and affection of her Indian subjects. To all my Feudatories and Subjects

throughout India I renew the assurance of my regard for their liberties, of respect for their dignities and rights, of interest in their advancement, and of devotion to their welfare, which are the supreme aim and object of my rule and which, under the blessing of Almighty God, will lead to the increasing prosperity of my Indian Empire and the greater happiness of its people."

—His Majesty King Edward VII.

(३)

पूज्यनीया महारानी विक्टोरिया ने शासन की बागडोर हाथ में लेने पर सन् १८५८ ई० में भारत के देशी नरेशों को एवं प्रजा को जो घोषणा की थी और मेरे पूज्य यशस्वी पिता ने ५० वर्ष के बाद उसी महत्व पूर्ण फर्मान को फिर दोहराया था। शाही शासन के उसी परोपकार शील एवं उदार उद्देश्य के चारटर्स (अधिकार पत्र) का मैं भी भविष्य में बराबर पालन करूंगा।

सन् १९१० ई० —हिज मेजेस्टी किंग जार्ज पञ्चम।

"Queen Victoria, of revered memory, addressed her Indian subjects and the Heads of Feudatory States when she assumed the direct Government in 1858, and Her August son My Father, of honoured and beloved name, commemorated the same most notable event, in His Address to you some fifty years later. Where are the charters of the noble and benignant spirit of Imperial rule, and by that spirit in all my time to come I will faithfully abide."

—His Majesty King George V.

[Letter to the Princes & People of India 1910].

(४)

भविष्य में उत्पन्न होने वाले प्रश्न सहयोग और पारस्परिक विश्वास की रीति से हल होवेंगे।

मेरी पूर्व घोषणा में मैंने मेरे शाही बुजुर्गों से और मेरे से दिये हुये विश्वासों को दोहराया था और साथ ही भारत के नरेशों के अधिकार, सत्व और गौरव को पूर्णतया कायम रखने का मेरा विचार भी सूचित किया था। राजा लोग विश्वस्त रहें कि यह प्रतिज्ञा बरावर अटल रही है और रहेगी।

—हिज मेजेस्टी किङ्ग जार्ज पञ्चम।

"The Problems of the future must be faced in a spirit of Co-operation and mutual trust.

"In my former Proclamation I repeated the assurance, given on many occasions by My Royal predecessors and Myself. My determination ever to maintain unimpaired the privileges, rights, and dignities of the Princes of Inda. The Princes may rest assured that this pledge remains inviolate and inviolable."

—His Majesty King George V.

(५)

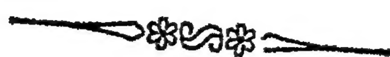
देशी रियासतों का बृटिश साम्राज्य से केवल बृटिश राज सिंहासन (सम्राट्) के नाते से ही सम्बन्ध नहीं है, वरन इस वात से भी है कि वे उस भूमि सम्बन्धी सामान्य विषयों में अधिकाधिक स्वार्थ लेते हैं जिससे वे और बृटिश प्रान्त समान सम्बन्ध रखते हैं।

सन् १९१७ ई० —मांटेगू चेम्सफोर्ड सुधार स्कीम।

"The integral connection of the States with the British Empire not only consists in their relations to the British Crown, but also in their growing interest in many matters common to the land to which they and the British Provinces alike belong.

1917 A. D. —Montogue Chemsford scheme.

अंतिम प्रार्थना



पुनः हो भारत का उत्थान।

अर्जुन, भीम द्रोण सम होवें भारत-सुत बलवान।
हरिश्चंद्र दशरथ बलि सम हों सत्य प्रतिज्ञावान॥
ब्राह्मण पढ़ें वेद, क्षत्रिय हों शूरवीर गुण खान।
वैश्य करें वाणिज्य, शूद्र हों स्वामिभक्त सज्ञान॥
राग अलापें एक्यभाव का, तज कर फूट महान।
गूंज उठे घर घर स्वदेश में, देशभक्ति की तान॥
कर्मवीर हों, धर्मधीर हों, नीति निपुण विद्वान।
कला कुशल हों, धैर्यवान हों भारत की सन्तान॥
सर्व देश गावे प्रभुवर फिर भारत के गुणगान।
किसी तरह हे नाथ! करो, अब इसका कल्यान॥
ब्रिटिश राज्य के छत्र तले हम पावें उच्च स्थान।
"भारत भूमि सुखी फिर होवे" यह कहदो भगवान॥

—सैनी शुभचिंतक पत्र से उद्धृत